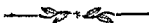


शिवम्

सुन्दरम्

श्री चन्द्रप्रभ

प्रस्तावना



सर्व सज्जन पुरुषों में निवदन है कि हमने जैन जाति की सेवा वजाने के हेतु हिन्दी जैन नाम का साप्ताहिक पत्र आज ८ महीने से निकालना शुरू किया है और यह भी निश्चित किया है कि हिन्दी भाषा में जो अपने धार्मिक पुस्तकों का आभाव है, वह शीघ्र दूर करें इसी उद्देश्य से विद्वजनों से प्रार्थना की थी कि आप लोग उत्तमोत्तम पुस्तकें रचकर हमें भेजें तो हम उन्हें प्रकाशित कर हमारी कर्मके अर्पण करें, हमारी प्रार्थना अनुसार श्रीयुन् सेठ सा० जमनालालजी कोठारीने ५।६ पुस्तकें प्रकाशित करने की थी वह समयानुसार प्रकाशित करके आप सज्जनों के सन्मुख रखते जावेंगे। प्रथम हिन्दी जैन ग्रन्थमाला का प्रथम पुण्य शुद्धदेव अनुभव विचार नामक पुस्तक हम इन्हा महाशयजी का दिया हुआ प्रकाशित कर चुके हैं अब यह द्वितीय पुण्य “आगमसार” नाम का आप की सेवा में उपस्थित है आशा है कि आप श्रीइस ग्रन्थ माला को उदाराश्रय देंगे।

जो जो पुस्तकें हम की जमनालालजी सा० न दी हैं उनका लेकर है स्वर्गीय चिदानन्दजी महाराज। आप ने इन पुस्तकों का लेकर छपवाने का इन्तजाम करने के वास्तु जमनालालजी सा० की थी थी वह उन्होंने हमें प्रदान की इस के लिये हम उनका हार्दिक धन्यवाद देते हैं, उक्त महाराज जीने जो जो पुस्तकें लिखी हैं वह आज दिन तक हिन्दी भाषा में प्रकाशित नहीं हुई हैं।

आगमसार—यह पुस्तक देवचन्दजी महाराज कृत गुजराती भाषा में प्रकाशित हुआ है पर हमारे पूर्व मालया, मारवाड इत्यादि

दर्शा म गुजराता भाषा जानन थाल बहुत कम लोग हानस पूज्य चिदानन्दजी महाराजने सब भव्य आत्मार्थियाके लाभार्थ इस का हिन्दी भाषातर कर अनेक जगह हतु, दृष्टान्ता से अच्छी तरह से समझायो है।

अन्तम पाठकगणों से यही प्रार्थना है कि इस पुस्तक म कोई गलती रह गई हो तो क्षमा कर हमें सूचित करे तो द्वितीया प्रसि में शुद्ध कर ली जावे। गलती होना या सभय है कि पुस्तक कई सुरतकी लिखी हुई है, वास्ते क्षमा मागता हू।

भवदीय

करनूरचन्द्र जवरचन्द गादिया

सम्पादक हिन्दी जैन—

सू०—उक्त चिदानन्दजी महाराजने अन्त मगल का कविता जा लिखी थीं वो कोठाराजो को न मिलन से नहीं टापा—

आगमसार.

(हिन्दी भाषान्तर)



श्री चिदानन्दजी महाराज कृत.

॥ श्री वीतरागायनम् ॥ उपाध्यायजी श्रीदेवचन्द्रजीकृत आगमसार ग्रन्थ गुजराती भाषा में बना हुआ है। सो उस ग्रन्थ के पठन पाठनमें गुजराती लोगोंके सिवाय अन्य २ देशके पाठक गणोंको उस गुजराती भाषा याचने और समझनेमें बहुत परिश्रम उठानेमें भी उस ग्रन्थ के रहस्य का यथावत् बोध नहीं हाता। इसलिये त्रिवने हा एक पाठकगणोंने मेरे मे कहा कि इस आगमसार ग्रन्थकी प्रक्रिया गुजराती भाषामें है उसी रीति की प्रक्रिया और वहीं २ जो कि कठिन विषय है उस कठिन विषयका रहस्य हिन्दुस्तानी सरल भाषामें होजाय तो हर एक पाठक गणोंको याचन और समझनेमें सुगमता होगी और जिन धर्मके रहस्यकी यथावत् प्राप्ती हो जायगी। इस कारण से आप पाठकगण के उपकारके लिये इस ग्रन्थकी गुजराती भाषा में हिन्दुस्तानी सरल भाषा बना दीजिये। इसलिये मैं इस गुजराती भाषाकी हिन्दुस्तानी सरल भाषा में श्रीदेवचन्द्रजी के ग्रन्थानुसार यथावत् कहने की तो सक्ती है नहा क्योंकि ऐसे पंडितों के किये हुए ग्रन्थका रहस्य जानना ही बहुत कठिन है परन्तु जिन गुरुन मेरेको इस जन धर्मका मार्ग बताया है उस गुरुकी चरण कृपामें मेरी बुद्धि के अनुसार निश्चित जर्प कहता हूँ जो जो बुद्धिमान पाठकगण मेरी न्यूनता दस्य तो ग्रन्थको यथावत् याच कर रहस्य समझ लें।

इसलिय मैं सनको उप्रता पूर्वक प्रिनती करता हूँ और श्राद्धयन्त्र-
जाने आगमसार ग्रन्थ का जिस रीति से प्रक्रिया लिखा है उसी
रीति से दिखता हूँ । प्रथम से जीव अनादि काल का मिथ्यात्वी
था सो काल लब्धि पाय (प्राप्त) करके तीन कारण करता है ।
(सो पेशतरकाल लब्धि किसको कहते हैं उसका दृष्टत और दृष्टत
देकर समझात हैं) कि जैसे नदी धोलन्याय करके पत्थर चीकना
कोई तरहका आकार अच्छा पकड़ लता है ॥ तैसे ही जीव भी
सशीपचेन्द्री को प्राप्त हाता है । सो पेशतर दृष्टत इस रीति से
है कि कोई नदी पहाड से बहती है उस नदीमें पाणी क सग
हाकर पत्थर भा पानाके जोरसे दुल्फता हुआ नदीमें बहता कुछ
दिनके बाद पत्थर और नल स भिडता हुआ अघातुटकर म्याना
हुआ ठोकर राय कर एक लम्बे वा गोल सचिस्वन आकार को प्राप्त
होता है । तन उसको लोग को तो नर्मदेशर महादव और कई
शालिग्राम आदि अन्क तरहकी कल्पनाउम सचिस्वन मुहावने
आकार को देखकर कर लते हैं उसका यथावत् स्वरूप हो जाता
अर्थात् कोई तरहका आकार बन जाना उर्माका नाम काल लब्धि
है । अन् इस दृष्टत का दृष्टत इस रीति से है कि यह जीव अव्य-
वहार राशि स निकल कर व्यवहार राशि म बादर निगोद, अथवा
वे इन्द्रा, ते इन्द्री, चौइद्री, पने को भोगता हुआ अनाम निर्जरा
से सशीपचेन्द्रा पनेका प्राप्त होना उसीका नाम काल लब्धि है ।
क्याकि जब तक सशीपचेन्द्रा पना न होय ततक जीव करण
आदि कोई व्यवस्था को न पहुँचे । इसलिय सशीपचेन्द्री होना
उसीका नाम काल लब्धि है । इस रीति सं काल लब्धि का स्वरु-
कहा ॥ इस काललब्धिवा पाय कर जाव ३ करण करता है । सो
पेशतर (३) करणका नाम कहते हैं ॥ १ यथा प्रवृत्ति करण ।

२ अपूर्ण करण । ३ अनिष्ट करण सो प्रथम यथा प्रवृत्ति करण जिस रीति से जीव करता है वो रीति दिखाते हैं । १ ज्ञानावरणीय । २ दर्शनावरणीय । ३ वेदनी । ४ अन्तराय । इन चारों कर्मोंकी (३०) कोडा कोडी सागर प्रमाणस्थिति होती है ऐसा जिन आगमोंमें कहा है । सो इन चार कर्मोंकी जो स्थिति है उसमें ठगनतीस कोडाकोडी किंचित् अधिकस्थिति को दूर कर अर्थात् मिल कुल अलग करे । और एत कोडा कोडी किंचित् न्यूनस्थिति राखे और १ नामकर्म । २ गात्रकर्म । इन दाना कर्मोंकी (२०) कोडा कोडी सागरकी स्थिति है जिसमें से किंचित् अधिक उगर्णास काडा कोडी सागरस्थिति अलग अर्थात् दूर करे । और माहना कर्मकी स्थिति (७०) कोडा कोडी सागर प्रमाणकी है । उनमें किंचित् अधिक (६९) कोडा कोडी सागर प्रमाणस्थिति को अलग (दूर) करे ॥ इस रीति से एत आयु कर्मना छोड़कर उस पर लिखी ७ कर्माभी स्थितिमें से एक कोडा कोडी सागर पन्थोपमर्भ से असत्यातया भाग न्यून अर्थात् कमती एत कोडा कोडी सागर प्रमाण सात कर्म की स्थिति राखे ॥ यार्को सातों कर्मा की सर्वस्थिति को दूर अर्थात् अलग करे ऐसा जा वैराग्य रूप उदासीन प्रमाण का होना उसका नाम यथा प्रवृत्ति करण है । क्योंकि मरकट वैराग्य होने से जीव उदास हो जाता है उम उदास पने के कारण से ऊपर लिखी हुई स्थिति को जीव दूर कर देता है । मरकट वैराग्य अर्थात् मसानिया वैराग्य उसको कहते हैं कि जन मनुष्य मरता है उसको जात विरादरी वाले मिलकर मसान अर्थात् मरघटमें दाग देने को ले जाते हैं उस वक्त जन तक उस को दाग न लगे तबतक वे लोग नाना प्रकारकी वैराग्य रूप बातें और ससार को तुच्छ बताना कहते हैं । किंचित् ही देरसे उस

वैराग्य और मसारकी तुच्छताको छोड़कर उदासीनता से अलग होकर नाना प्रकार की अच्छा २ खान पीने नाच रंग व्याह सारी का बात करन लग जात हैं सो उस किंचित् वैराग्य परिणाम का पता नहा रहता । इसलिये उसको मर्कट वैराग्य कहा ॥ इस रानि से ही यथा प्रवृत्ति करणको अनक जीव करे । अथवा अभव्य भी इस करण को करे और एक जीव इस यथा प्रवृत्ति करण को अनन्ति बार कर परन्तु इस कारणकरनसे कोई जीवका कार्य सिद्ध नहीं होता इस लिये इसको यथा प्रवृत्ति करण कहा । अब दूसरा अपूर्व करण का स्वरूप कहते हैं । कि जो यथा प्रवृत्ति करण में किंचित् न्यून एक कोडा काडा मागर की स्थिति राखा थी उस स्थिति मस एक अन्तर्मुहूर्त और अनादि मि यात्व जनन्तानुग्रन्था कपाय अर्थात् नोव, मान, माया लोभ डोडन का अज्ञान हय अर्थात् टाडना (दूर करना) ज्ञान उपादय अथान् ग्रहण करना ऐसा जो इच्छा रूप पारणाम । अपूर्व कहता पश्चर कभा अज्ञान को छोडना ज्ञानको ग्रहण करना एसा परिणाम अनादी कालस न हुई थी और जिस वक्त ऊपर लिखा हूँ इच्छा हानि सही इसको अपूर्व करण कहा ॥ क्याकि इस करणको कहा नाव करेगा जोकि समकित क लायन होगा ॥ और ता सर्गजिनर लायक नहीं हूँ वो इस अपूर्व करणको कदापि न करमवगा क्योकि देखो ॥ श्लोक ॥ ताल पस्वति लिगममध्यम शुद्धिर्निचार यति आगमतत्त्वतु बुध् परी शत सर्वयत्नो ॥ १ ॥ इस गतिस अपूर्व करणको स्वरूप कहा । (प्रश्न) यथाप्रवृत्ति करणसे अपूर्व करणको कति उत्तम कहा इसका कारण क्या है (उत्तर) भा देवातु प्रिय यथा प्रवृत्ति करणसे अपूर्व करणको जनि- उत्तम कहा इसका कारण यह है कि यथा प्रवृत्ति करणको अनेक

जीव करे और अभय भी करे और एक भवमें अर्थात् एक जन्म में कईवार यथा प्रवृत्ति करण करे ॥ और अपूर्व करण अभय तो कभी नहीं करम्के । और भव्यजीव भी जो अपूर्व करण करे वो प्राय करके अनिवृत्ति करण अवश्यमेव करे इस लिये अपूर्व करणकी उत्तमता कही । दूसरा जो तुमने मन्दह किया कि यथा प्रवृत्ति करण कर्मोंका क्षय करता है और अपूर्व करणमें कर्म क्षय नहीं होता ॥ इस सन्देहके दूर करनेके वास्ते एक दृष्टान्त देते हैं कि जैसे कोठोंमें धान भरा हुआ है और उसका नीचेसे ढकन रोल देय तो उस कोठीका धान नीचे तमाम ढेर हो जाय परन्तु जो उस कोठीके कोनोंमें वा भीतसे चिपका हुआ धान है सो ढकन रोलनेसे नहीं निकलता किन्तु हाथों गेरनेसेही निकलेगा इस दृष्टान्तका दृष्टान्त ऐसा हुआ कि जो (७०) कोडाकोडी और (३०) कोडाकोडी वा (२०) कोडाकोटी सागरोंकी स्थिति (७) कर्मोंकी ऊपर लिख आये हैं सो वतौर कोठीके नाजके समान है सो यथा प्रवृत्ति करणवालेका वैराग्य रूप उपासीन रूप ढकन रोलनेसे एक सग कर्मोंकी स्थिति दूर होजाती है वतौर नाजके ढेरके समान ॥ और जैसे उस कोठीमें चिपटा हुआ नाज जिना हाथ गेरे नहीं निकलता तैसेही जगतक अज्ञान छोडना और ज्ञानको ग्रहण करने रूप परिणाम वतौर हाथ गेरनेके न होंगे तबतक वो चिपटा हुआ धान न निकले तैसेही कर्म भी वतौर धान चिपटनेके क्षय ज्ञेय समझे बिदून नहीं दूर हो सके हैं ॥ इस लिये जो अपूर्व करणमें अज्ञानका छोडना और ज्ञानका ग्रहण करना इस रीतिके परिणाम होनेसे यथा प्रवृत्तिसे अपूर्व करण उत्तम कहा ॥ अन तीसरा अनिवृत्ति करणका स्वरूप कहते हैं ॥ जो स्थिति कर्मोंकी पिछले करणोंमें बाकी रही है उसमेंसे भी मुहूर्त

रूप स्थिति दूर करके शुद्ध निर्मल समकित पावे मिथ्यात्वका उदय मित अथात् दूर हाथ तब जाव उपस्रसमकित पाव । ऐसा जा पारणाम उसका नाम अनिवृत्ति करण कहते हैं ॥ इस कारण करनेस जीव गठा भदा कहा जाता है क्योकि श्री आवश्य क नियुक्तिमे ऐसा कहा है ॥ गाथा ॥ जागठोतापढम गठी समय छे उभवपाउ अनियही करणे पुण समत्तपुरकडे जीवेऊ सरदे सड-हुत्ताय च विज्ञायण देवो इयीमन्तुम्स अणुदयेउर सम सम्म-लह इजावो ॥ इन दा गाथाका किचिन् अर्थ दिखाते हैं कि (जागठातापढमक०) गठीके पास प्रथम अर्थान् यथा प्रवृत्ति करण करनगला आता है । और गठी छेदनेवाला जीव परिणामसे अपूर्ण करण करता है । और अनिवृत्ति करणवाला जीव अन्त करण करता हुआ समकितको प्राप्त हाता है ॥ दूसरी गाथाका अर्थ ॥ जा जात्रसमकित पाता है वो जाव उस वक्त आनदका प्राप्त होता है कि जंस दावानल अग्नि लगी हुई होय और एक साथही शान्त हाजाय तमही जात्र मिथ्यात्व रूप अग्निसे अलग होकर आनदका प्राप्त होता है । इसका विज्ञाप विचार दरना होय तो हमारा बनाया हुआ (जिनाज्ञा त्रिधि प्रकाश) ग्रन्थम देखो ॥ इस रातिस तीन कारणका म्यरूप कहा ॥ इन तानों करणोका किचिन् अर्थ भा दिखात हैं कि ॥ जिस कामम सनकी प्रवृत्ति होय अर्थात् हरक कोइ करता होय इसका नाम यथा प्रवृत्ति करण है और अपूर्ण करणका अर्थ यह है कि जा पूर्ण नाम पहलकभा भी हेय छाडना और उपादेयको अगाकार करना ऐसा पारणाम आया होय और जिस समयम अज्ञानको छोडना ज्ञानना ग्रहण करना ऐसा पारणाम हाय उमका नाम अपूर्ण करण है ॥ अब तीसरा अनिवृत्ति करणना अर्थ करत हैं कि अन्यनाम दूसरसे होता है निवृत्ति

अर्थान् अलग हो जाना उसका नाम अनिष्टि करण है ॥ इसरा-
 त्तिसे इन तानोंका अर्थ कहा (प्रश्न) आपने अपूर्णको कहा कि
 पेश्तर कभी न होय उसका नाम अपूर्ण है और आगमोंमें कहा
 है कि पूर्ण नाम थोड़ा देर ठहर कर चला जाय उसका नाम अपूर्व
 है तो आपका कहना क्यों कर बनेगा (उत्तर) भो देवानु प्रिय
 अभी तेरेको द्रव्यानुयोगके जाननेवाले और गुग्गुलु वामक
 वमने वाले शुद्ध गुरुओंका संग नहीं हुआ है केवल तु र गर्भित
 वैराग्यजालोंका संग हुआ है इस लिये जिन मतके रहस्यकी खबर
 नहीं है सो हे भोले भाई हम जगह अपूर्व कहनेका अभिप्राय तेरेस
 मझमें न आया इस लिये तेरेको ऐसा सन्देह हुआ सो इस तेरे
 सन्देह मिटानेके वास्ते कहते हैं कि जिन मतमें अनादि अनन्तदि
 चौभगी हरेक चीजमें लगती है सो इस जगह भी उस चौभगीके
 लगानेमें सन्देह मिट जाता है सो चौभगीका दूसरा भाग अनादि
 सान्त भागसे इस जगह अपूर्व करण है और जो थोड़ीसी देर ठह-
 रता है वमको सादि मान्त अपूर्ण कहते हैं इस लिये हम प्रत्यक्
 त्तो उपाध्यायजीका अभिप्राय अपूर्ण करण अनादि सान्त भागसे
 मालूम होता है ॥ हम रीतिमें तेरे प्रश्नका उत्तर हुआ ॥ तीनों
 करण करके बाज्जीर समकित पावे उस समकितकी श्रद्धा अर्थात्
 विश्वास दो प्रकारका होता है । एक तो व्यवहार अर्थात् शुभ व्यव-
 हार ॥ दूसरा निश्चय अर्थात् शुद्ध व्यवहार ॥ अब इस जगह कोई
 ऐसा सन्देह करे कि समकितकी प्राप्ति होगई तो फिर श्रद्धा दो तर-
 हकी है ऐसा क्यों कहा ॥ इस शकाका समाधान ऐसा है कि
 समकित पायेके बाद जीव फिर भी भिन्नात्ममें चला जाता है
 इस लिये श्रद्धा दो प्रकारकी कही ॥ अथ प्रथम व्यवहार समाकेत
 का स्वरूप कहते हैं कि । देव श्रीभर्तृन्त । गुरु जो साधु सीधा

गुण कहते हैं ॥ प्रथम धर्मास्तित्रायको ४ गुण अरूपा १ । अचेतन २ । अत्रिय ३ । चलन सहाय अथान् जीव पुद्गलको चलनेमें सहाय देनेवाला ५ । अब अधर्मास्तित्रायके चार गुण कहते हैं ॥ अरूपा १ । अचेतन २ । अत्रिय ३ । स्थिति सहाय अथान् जीव पुद्गलको स्थिर करनमें सहाय देने वाला ४ ॥ अब आकाशास्तिकायके ४ गुण कहते हैं ॥ अरूपा १ । अचेतन २ । अक्रिय ३ । अत्रगाहना दान गुण अथान् कुल द्रव्योको जगह देने वाला ४ ॥ अब काल द्रव्यके चार गुण कहते हैं ॥ अरूपा १ । अचेतन २ । अत्रिय ३ । नया पुराना बतना अर्थान् तबको पुराना करना ऐसी है वृत्ति जिसका उमका काल कहते हैं ४ ॥ अब पुद्गलास्तिकायके चार गुण कहते हैं ॥ रूपा १ । अचेतन २ । सत्रिय ३ । मिश्रण त्रिगुण अर्थान् सामिल होजाना अलग होजाना अथवा पूरन गलन है स्वरूप जिनका उसको पुद्गल द्रव्य कहते हैं ४ ॥ अब जीवके चार गुण कहते हैं ॥ अनन्त ज्ञान १ । अनन्त दर्शन २ । अनन्त चारत्र ३ । अनन्त वीर्य ४ । यह चार गुण जीवके कहे ॥ इस रीतिसे छठों द्रव्योंके गुण कहे ॥ अब पर्याय कहते हैं ॥ धर्मास्तिकायके चार पर्याय ॥ रन्द १ । दश २ । प्रदेश ३ । अगुरु लघु ४ । अधर्मास्तिकायके चार पर्याय ॥ रन्द १ । देश २ । प्रदेश ३ । अगुरु लघु ४ । आकाशास्तिकायके चार पर्याय ॥ रन्द १ । दश २ । प्रदेश ३ । अगुरु लघु ४ । काल द्रव्यके चार पर्याय ॥ अतीत अर्थान् भूत १ । अनागत अर्थान् भविष्यत् २ । वर्तमान ३ । अगुरु लघु पुद्गल द्रव्यके चार पर्याय ॥ वरण १ । गन्ध २ । रस ३ । स्पर्श अगुरु लघु सहित ४ । जीव द्रव्यके चार पर्याय ॥ आच्या वाच १ । अनभवगाह २ । अमूर्तिक ३ । अगुरु लघु ४ । इस रीतिसे छठों द्रव्योंके पर्याय रह ॥ अब इन छठों द्रव्योंके गुण

पर्यायम जो कि आपसमे स धर्मोपना है उसको कहते हैं ॥ अगुरु-
 लघु पर्याय सर्व द्रव्योंमे सरोरु अर्थात् समान है ॥ और अरूपी
 गुण पाच द्रव्यामे है एक पुद्गलमें द्रव्यमे नहीं ॥ अचेतनपना
 पाच द्रव्योंमे है एक जीव द्रव्यमें नहीं ॥ सक्रिय गुण जीव और
 पुद्गल दो द्रव्योंमें है बाकी चार द्रव्योंमें नहीं ॥ चलनेमें सहाय
 देना एक धर्मास्तिकायमे है बाकी पाचमे नहीं ॥ स्थित होनेमे
 सहाय देना एक धर्मास्तिकायमें है बाकी पाचमें नहीं ॥ अवगा-
 हना अर्थात् जगह देनेका गुण एक आशास्तिकायमें है बाकी पाच
 नहीं ॥ धर्तना अर्थात् नया पुराना करना काल द्रव्यमे है बाकी
 ५ में नहीं ॥ मिलन निरंतरन अर्थात् शामिल होना वा जुदा होना
 एक पुद्गल द्रव्यमें है बाकी पाचमें नहीं ॥ ज्ञानादि चेतनालक्षण
 एक जीव द्रव्यमे है बाकी पाच द्रव्योंमे नहीं ॥ यह मूल गुण किसी
 द्रव्यका किसी द्रव्यमे नहीं मिलता इस लिये इस मूल गुणके न
 मिलनेसे जुदे २ द्रव्य कहलाते हैं ॥ धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, और
 आकाश द्रव्य, इन तीनों द्रव्योंमें तीन गुण और चार २ पर्याय
 एक सरीरु है ॥ और तीन गुण करके काल द्रव्य भी इन्हींके
 समान है ॥ इस रीतिसे इनका साधर्म और वैधर्मपना कहा ॥
 अब छ द्रव्योंके गुण जाननेके वास्ते एक गाथा अर्थ समेत कहते
 हैं ॥ गाथा ॥ परणामिजीव मुक्तास पएसा एक रिक्ता किरियाय
 निच्च कारणकत्ताससठत्रगयइयर अपवेम ॥ अर्थ ॥ निश्चयनय
 करके छ द्रव्य परणामी अर्थात् अपने २ परणामों है और व्यन-
 हारनयसे जीव और पुद्गल दो द्रव्य परणामी है । धर्म अधर्म,
 आकाश, काल, ये चार द्रव्य अपरिणामी है ॥ छ द्रव्योंमें एक
 जीव द्रव्य है, पाच अजीव द्रव्य है । छ द्रव्योंमें एक पुद्गलरूपी
 है, पाच अरूपी है । छ द्रव्यमें एक काल द्रव्य अप्रदेशी है, बाकी

पाच स प्रदेशा है । जीव द्रव्य असल्यान् प्रदेशी है, पुद्गल प्रमाण अनन्त प्रदेशा है । धर्म, अधर्म, असल्यान् प्रदेशी है आकाश लोक अलोक अनन्त प्रदेशी है । छ द्रव्यमे धर्म, अधर्म, आकाश, ये तीन द्रव्य एक रह । जीव पुद्गल, काल ये तीन द्रव्य अनक हैं ॥ छ द्रव्यमे एक आकाश क्षेत्र है, और पाच क्षेत्रिय है ॥ निश्चयनय करके छ द्रव्य सत्रिय हैं । व्यवहारनय करके जीव, पुद्गल, दो द्रव्य सत्रिय । चार द्रव्य अत्रिय है ॥ निश्चयनय करके छ द्रव्य नित्य, और अनित्य है, व्यवहार नय करके जीव पुद्गल अनित्य है । चार द्रव्य नित्य है ॥ छ द्रव्य में एक जीव द्रव्य कारण है । ५ अकारण है ॥ निश्चय नय करके छ द्रव्य कर्ता है । व्यवहार नय करके एक जीव द्रव्य कर्ता है ॥ ५ अकर्ता है । छ द्रव्य में एक आकाश सर्व व्यापा है । ५ द्रव्य लोक व्यापी है । इस रीतिसे छओं द्रव्य एक क्षेत्रमें इक्ठे रहते हैं परन्तु एक दूसरे में मिल नहीं इसलिये इनको जुदे २ द्रव्य कहे ॥ अत्र इन छओं द्रव्यों में आठपक्ष उतार कर लिखाते हैं सो प्रथम आठपक्ष के नाम कहते हैं ॥ १ नित्य । २ अनित्य । ३ एक । ४ अनेक । ५ सत्य । ६ असत्य । ७ वक्तव्य । ८ अवक्तव्य ॥ इन आठों पक्षोंको एक २ द्रव्य में घटाय कर लिखाते हैं सो पश्तर नित्य, अनित्य, छओं द्रव्यों म जुदी २ उतारते हैं ॥ धर्मास्तिकायके चार गुण एक पर्याय अर्थात् स्कन्द ये पाच नित्य हैं । देश प्रदेश, अगुरुलघु, ये तीन पर्याय अनित्य है ॥ इसरीति से अधर्मास्तिकायके चार गुण एक पर्याय स्कन्द लोक प्रमाण नित्य है ॥ देश, प्रदेश, अगुरु, लघु ये तीन पर्याय अनित्य है ॥ इसरीति से आकाशास्तिकायके चार गुण स्कन्द लोक अलोक प्रमाण नित्य है ॥ दश, प्रदेश, अगुरुलघु, ये तीन पर्याय अनित्य है ॥ काल द्रव्यके चार गुण

नित्य है ॥ पर्याय चारा ही अनित्य है ॥ पुद्गल द्रव्य के चार गुण नित्य हैं । पर्याय सत्र अनित्य हैं । जीव द्रव्यके चार गुण और तीन पर्याय नित्य हैं ॥ एक अगुणलघु पर्याय अनित्य है । इस रीतिमें नित्य, अनित्य, पक्ष कहा ॥ अत्र एक, अनेक, पक्ष कहते हैं ॥ धर्म, अधर्म, द्रव्यका स्कन्ध लोक प्रमाण एक है ॥ गुण, अथवा पर्याय, वा प्रदेश, अनेक, हैं । गुण अनन्ता है, पर्याय अनन्ता है, प्रदेश असंख्याता है, इस रीतिसे आकाश द्रव्य में स्कन्ध लोक अलोक प्रमाण एक है ॥ और गुण, पर्याय, प्रदेश, अनेक हैं, क्योंकि गुण अनन्ता, पर्याय अनन्ता, प्रदेश अनन्ता, ऐस ही काल द्रव्य में वर्तना रूप गुण तो एक है । और गुण पर्याय समय अनेक हैं । गुण अनन्ता पर्याय अनन्ता, समय अनन्ता, क्योंकि देसो अतीत अर्थात् भूत कालमें अनन्ता समय हाँगये । और अनागत काल अर्थात् भविष्यत् कालके अनन्ते समय हाँगये । वर्तमान कालका एक समय है ॥ इसी रीतिसे पुद्गल द्रव्यके परमाणु अनन्ता है ॥ एत परमाणुमें अनन्ता गुण और पर्याय हैं परन्तु सर्व परमाणु में पुद्गलपना एक है ॥ इसी रीतिसे जीव अनन्ता है । सो एक २ जीव में असंख्यात प्रदेश हैं । और अनन्ता गुण हैं अनन्ता पर्याय हैं, परन्तु सर्व जीवाग जीवपना अर्थात् चतुष्टय लक्षण एक सरीर्या है । इसरीति से इत छत्रा द्रव्यमें एक, अनेक पक्षकही परन्तु इस एक अनेक पक्षसे जीव द्रव्य में और पुद्गल द्रव्य में अनेक पक्ष तो घनती है परन्तु एक पक्ष नहीं घनती इन लिये जिज्ञासु प्रश्न करता है (प्रश्न) सर्व जीव सरीर्या है यह कहना नहीं बनता क्योंकि जुगी व्यवस्थाशीलगी है कि एक जीव तो सिद्ध परमात्मा आनन्दमयी है दूसरा ससारी जीव कर्मके बस में पड़ा हुआ दुःखी धीरता है तो इस व्यक्त्या को जुगी २ दृग्गकर

क्योंकर एक पक्ष घटसक्ति है (उत्तर) भो देवानुप्रिय तेरेको अभी जिन आगमके रहस्यकी खबर नहीं है इसलिये तेरेको ऐसी तर्क उठती है और एक पक्ष समझम नहीं आता इसलिये तेरेको समझाते हैं कि निश्चयनय करके सर्व जीव सिद्ध समान है क्योंकि सर्व जीव कर्म क्षय करके सिद्ध होते हैं इस लिये सर्व जीवकी सत्ता एक है ॥ जो तेरेको ऐसा सन्नेह फिर उत्पन्न होय कि सर्व जीवकी सत्ता एक है तो अभव्य मोक्ष क्यों नहीं जाता है ॥ तिस का समाधान ऐसा है कि अभव्यका कर्मचाकना है इस लिये उसका स्वभाव पलटे नहीं परन्तु आठ रुचक प्रदेश सर्व जीवके मुख्य है उन आठ रुचक प्रदेशोंमें कर्मका सयाग नहीं होता वे आठ रुचक प्रदेश समीक निर्मल है चाहे तो भव्यजीव हों चाहे अभव्य हों ॥ इस लिये उन आठ रुचक प्रदेशोंकी अपेक्षासे नगम नय वाला निश्चय नय करके उस अभव्य का भी सिद्धके समान मानता है ॥ दूसरा और भी सुनो की सत्रे जाव चेतना लक्षण करके एक मरीखा है इस लिये एक अनेक पक्ष जीवम बनगई ॥ आर पुद्गल में भी एक पक्ष इस रीतिसे बनती है कि परमाणु में पुद्गलपना सर्वमे एक है इस लिये पुद्गल में भी एक पक्ष बनता है ॥ अब सत्य असत्य पक्ष भी छत्रों द्रव्यों में दिखते हैं ॥ स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल, स्वभाव, करके सत्य है ॥ और पर द्रव्य, परक्षेत्र, परकाल, परभाव, करके असत्य है ॥ इसलिये इस जगह अब द्रव्य क्षेत्र काल भावना स्वरूप दिखते हैं सो एक २ द्रव्यका जुदा २ समझाते हैं ॥ धर्मास्तिकायका स्वद्रव्य गुण पर्यायका भाजना अर्थात् समुदाय जिस में गुण पर्याय रहे उस को द्रव्य कहना ॥ ऐसे ही अधर्मास्ति कायका स्वद्रव्य गुण पर्यायका भाजन ॥ अथवा आकाशका स्वद्रव्य गुण पर्यायका भाजन । ऐस ही काल द्रव्यका

और पुद्गल द्रव्यका अथवा जीव द्रव्यका भी स्वद्रव्य जान लेना ॥ अब स्वक्षेत्र कहते हैं । धर्म, अधर्म, द्रव्योंका स्वक्षेत्र असरयात प्रदेश है । आकाशका स्वक्षेत्र अनन्ता प्रदेश है । कालका स्वक्षेत्र समय रूप है । पुद्गलका स्वक्षेत्र परमाणु है । जीव द्रव्यका स्वक्षेत्र एक जीवका असरयाता प्रदेश है । अत्र छत्रों द्रव्योंका काल कहते हैं कि स्वकाल अगुरुलघु पर्याय है सोही स्वकाल है सो इस अगुरुलघुका वर्णन तो आगे करेंगे परन्तु इम जगह तो स्वकाल अगुरुलघुको कहा है क्योंकि अगुरुलघुकोही काल कहते हैं इस अगुरुलघुमे ही उत्पाद व्यय होता है सो वो उत्पाद व्यय सब द्रव्यामे होता है इसलिये इस अगुरुलघुको स्व २ काल कहा ॥ अब स्वभाव कहते हैं कि ये छत्रों द्रव्यों में जो मुख्य गुण अर्थात् जिस गुणसे द्रव्य जाना जाय उसको मुख्य गुण कहते हैं जैसे धर्मास्तिकाय में मुख्य गुण चलन साहाय है सोही धर्मास्ति कायका स्वय स्वभाव है ॥ ऐसे ही अधर्मास्तिकायमे मुख्य गुण स्थिर करनेका साही अधर्मास्तिकायका स्वभाव है ॥ इसीरीतिसे आकाशमे मुख्य गुण अब गाहना अर्थात् जगह देनेका स्वभाव है ॥ इसीलिये उसका मुख्य स्वभाव अत्र गाहना दान गुण है ॥ इसी तरह काल द्रव्यका स्वभाव वर्तना लक्षण अर्थात् नया पुराना करना यही स्वस्वभाव है ॥ पुद्गल द्रव्यका मुख्य गुण मिलन त्रिस्तरन रूप वही पुद्गलका स्वस्वभाव है ॥ इसरीतिसे जीवका मुख्य गुण ज्ञानादि चेतना लक्षण है सोही जीवका चतनस्वभाव है । इस छत्रों द्रव्यामें द्रव्य क्षेत्र काल मात्र कहा ॥ इस रीति से स्वद्रव्य स्व क्षेत्र, स्व काल, स्वभाव करने सत्य है ॥ पर द्रव्य, पर क्षेत्र, परकाल, परभाव, करके असत्य है ॥ इम रीतिसे सत्य, असत्य पक्ष कहा ॥ अत्र वक्तव्य, अवक्तव्य, पक्षको दिखाते हैं कि ॥ छ द्रव्यमे अन्त गुण पर्याय वक्तव्य कहता वचनमे कहा जाता है ॥

वास्ते चौभगी कहीं है । और अनेक इन दो पक्षोंसे नयका स्वरूप दिखानेगे । और सत्य असत्य पक्षसे सप्तभगी का स्वरूप दिखावेगे । वक्तव्य अवक्तव्य से प्रमाण आदि कहेगे इसलिये इन आठ पक्षकी ही विस्तार पूर्वक प्रक्रिया लिखते हैं कि । प्रथम नित्य, अनित्य, पक्ष से चौभगी पैदा होती है सो उस चौभगीको दिखाते हैं । १ अनादि अनन्त । २ अनादि सान्त । ३ सादीमात । सादि अनन्त । यह चार भागे हुए इन चारों भागों का अर्थ करत हैं । अनादि अनन्त उम को कहत हैं कि जिसकी आदि भी नहीं और अन्त भी नहीं । अनादि सान्त उसको कहते हैं कि जिस की आदि तो है नहीं और अन्त है । सादिसान्त उसको कहते हैं कि जिसकी आदि भी है और अन्त भी है । सादिअनन्त उसको कहते हैं कि जिसकी आदि तो है और अन्त नहीं है । इस रीति से इन चारों भागों का अर्थ हुआ । अब इन चारों भागों को छ द्रव्योंमें उतार कर दिखाने हैं सो प्रथम जीवमें चार भाग इस तरह से उतारते हैं । ज्ञानादि गुण जोयका अनादि अनन्त हैं । और नित्य है । आर भव्य जीवके कर्मका संयोग अर्थात् सम्बन्ध अनादि मात है । क्योंकि कर्म लगने की तो खबर है नहीं कि जोय को कर्म किम काल में लगे थे । और जब भिद्विषे प्राप्त होता है तब कर्म सप्त छूट जाते हैं इसलिये अनादिमात भागो जीवमें हुआ । और जो दवता नारकी (नरक), त्रिर्युध्चे (पशु पत्नी) आदि, मनुष्य, अर्थात् यह चार गतिकी ८४ लक्ष जीव योनि में जन्म लेना और मरणका होता इसलिये सादीमात है क्योंकि उस जन्म मरण का आदि और अन्त दोनों हैं । और जो जीव कर्म से मुक्त अर्थात् अलग होकर मोक्षमें प्राप्ति होता है । वो जीव सादि अनन्त

भागसे है क्योंकि मानस गया चमत्ता ना आदि है फिर इस
 सत्कारण क्वापि न आवगा इमत्रिये उम जावमं सादि अत्र
 भागा हुआ । इस रीति में त्रयम चौभाग फटा । अब धर्मास्ति
 कायमें चौभाग कहा है । धर्मास्ति कायमें चार गुण और लोक
 प्रमाण स्वरूप ये पांच चीज अत्रादि अत्र है । और अनादिगत
 भागा इसमें नहीं है । दश, प्रदेश, अगुरु लघु य सादिसात भागे
 में है । बार विद्व जीवा में जा धर्मास्ति काय ५ प्रमाण लगे
 हुए हैं व सादि अनन्त भागसे है । य धर्मास्ति कायम चार
 भागे व० । इसी तरह अपर्मास्ति कायम जी जावाशम समस्त
 लेना ॥ पुत्राठमें चार गुण अत्रादि अनन्त है । और पुद्गलका
 स्वभावसादि सान्त भाग में है । दो भाग पुद्गलमें वाते हैं
 नहीं । फल द्रव्यमें चार गुण अनादि अनन्त है और पर्यायमें
 अतीत अर्थात् मृतकाल अत्रादिमात्र है ' वृत्तान्त काल सादिमात्र
 है । अनागत अर्थात् भविष्यकाल सादि अनन्त है । इस रीति
 से सा छत्रों द्रव्यम चौभाग कही अब द्रव्य मात्र फल भावमें
 चौभाग कहते हैं जीव द्रव्यम द्रव्यज्ञानादि गुण अत्रादि अत्र है ।
 जीवका प्रमाण जो जीवका क्षेत्र है सा सादिसात है । जीवका स्व
 फल अगुरु लघुपाया तो अत्रादि अनन्त है परन्तु अगुरु लघु
 का पैदा होना वा विनाश होना सो सादिसात है । त्रयमा स्वभाव
 गुण अर्थात् ज्ञान सो अत्रादि अनन्त है इस रीति से धर्मास्ति
 काय का स्व द्रव्य अनादि अनन्त है स्वक्षेत्र असत्काल प्रदेश लोक
 प्रमाण व सादि सत् है । स्वकाल कहता अगुरु लघु करके तो
 अत्रादि अनन्त है । पर तु उत्पादव्ययता अत्रात् सादिसात
 है । और स्वभाव गुण चरण महाय जादि अनादि अनन्त है
 परन्तु देश, प्रदेश की अपेक्षासे सादासात है ॥ इस रीति से

अप्रमांस्त्रिकायमे समज्ञ तेना । आकाशास्त्रिकायमे स्वद्रव्य अनादि
 अनन्त है । स्वप्नेत्र अनन्त प्रपेश लोकांलोक प्रमाणम अनादि
 अनन्त है । स्वकाल अगुरु लघु गुण अनादि जान्ते है ॥ परन्तु
 उत्पादव्ययकी अपेक्षा से सादीसात है । सो आकाश क दो भेद हैं
 १ लोक आकाश । २ - गोक आकाश । सो लोक जायाशका
 स्त्रय सादिसान्त ० अलोक आकाश स्त्रय सादी अनन्त है ।
 इस जगह ताई ऐसी शका करे कि अलोक आकाश का सादि-
 म्यों कदा स्वोक्ति आकाशका तो नहीं जाति न नहीं
 तिगाशका समाधान तेना है कि इस जगह लोक आकाशका
 अनन्त है इस जगहमे जलोक आकाशकी जाति है इसलिये सादी
 अनन्त कदा ॥ अत्र कालम कइते हैं कि कालका स्वय द्रव्य वर्तना
 गुणात्मो अनादि अनन्त है ॥ स्वय क्षेत्र जो समय सामादि मान्त
 है ॥ स्वय काज जा अगुरु लघु सो ता अनादि अनन्त है ॥ पर
 न्तु उत्पाद व्ययकी अपेक्षाम सादि मान्त है ॥ स्वभाव गुण वर्तना
 लक्षण सो अनादि अनन्त है ॥ परन्तु अतीत अर्थात् भूतकाल
 अनादि मान्त है ॥ वर्तमान समय सादि मान्त है ॥ आगत
 अर्थात् भविष्यत काल सादी अनन्त है ॥ इस रीतिमे कालमें
 चौभगी कही ॥ अत्र पुद्गलमें चौभगी कइते हैं ॥ पुद्गल द्रव्य
 में द्रव्यपना अर्थात् गुणादि अनादि अनन्त है ॥ परन्तु परमाणु
 सो सादी सान्त है ॥ स्वय काल अगुरु लघु गुण सो ता अनादि
 अनन्त है ॥ परन्तु उत्पादव्ययकी अपेक्षा से सादी सान्त है ॥
 स्वय भाव गुण मिलन विपरनादि तो अनादि इस
 रीतिमे लला द्रव्या में द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव कक चौभगी
 कही ॥ अत्र लला द्रव्यों म जो परस्पर सम्बन्ध है उसकी चौभगी
 कइते हैं ॥ प्रथम आकाश द्रव्य है उसमे दो भेद है तिसमें जलोक

आकाश से तो कोई द्रव्यका सम्बन्ध है नहीं क्योंकि उस अलोक आकाश में कोई द्रव्यही नहीं तब सम्बन्ध किसका होय इस लिये लाक आकाशका सम्बन्ध रहते हैं कि । धर्म द्रव्य, अधम द्रव्य, इन दोनों द्रव्योंका आकाश से अनादि अनन्त सम्बन्ध है क्यों कि लाक आकाश के एक २ प्रदेश में धर्म द्रव्यका एक प्रवेश ऐसे ही अधम द्रव्यका प्रवेश आपस में मिला हुआ है सा जिस वक्त में य अलग होगा ऐसा कोई नहीं कह सक्ता इस लिये अनादि अनन्त है ॥ और लोकाकाश क्षेत्र और जीव द्रव्यका अनादि अनन्त सम्बन्ध है ॥ परन्तु जो सारा जीव कर्म सहित है उस जीवका और लोकाकाश क्षेत्रका मादि सान्त सम्बन्ध है ॥ सिद्धजीव और सिद्ध श्रेया आकाश प्रदेशका सादा अनन्त सम्बन्ध है ॥ पुद्गल द्रव्यका आकाश से अनादि अनन्त सम्बन्ध है ॥ परन्तु आकाश प्रदेश और पुद्गल परमाणुका सादा सान्त सम्बन्ध है । इस रीतिसे आकाशका सम्बन्ध रहा ॥ जिस रीतिसे आकाशका सर्व द्रव्यों से सम्बन्ध कहा इसी तरह धर्म द्रव्य, अधम, द्रव्य, का भी सम्बन्ध जान लेना ॥ अब जीव और पुद्गलका सम्बन्ध कहते हैं ॥ अभय जीवसे पुद्गलका सम्बन्ध अनादि अनन्त है क्या कि अभव्यक कर्मरूप पुद्गल कदापि नहीं टूटेगा इस लिये अनादि अनन्त है ॥ और भव्यजीवके कर्मरूप पुद्गलसे अनादि सान्त सम्बन्ध है क्योंकि जब भय जाव यथावत् क्रिया करके कर्मात्तु छुटावेगा तब सर्व कर्म अनादिका सान्त अथात् छूटगा और मात्र न जायगा हम लिये अनादि सान्त है ॥ इस रीतिसे सम्बन्ध कहा ॥ अब थाडासी परिणामकी प्रक्रिया दिखाते हैं ॥ निश्चय नय करके छुभा द्रव्य स्वयंभार परिणाम ये परिणाम है इसलिये परिणामा है सा परिणामी पत्ता साक्षता अर्थात् अनादि

अनन्त है ॥ परन्तु जीव पुद्गल इन दो द्रव्योंमें मिलन सम्बन्ध भाव है सो पर परणामी है ॥ परन्तु परिणामीपना अभव्यके तो अनादि अनन्त है ॥ और भव्यजीवके अनादि सान्त है ॥ और पुद्गल में परिणामीपना सत्ता करके अनादि अनन्त है ॥ परन्तु मिलना और जुटा होना निस करके सादि सान्त है ॥ और जीव पुद्गल दोनों मिले हुए सक्रिय हैं ॥ परन्तु जीव पुद्गल कर्ममें रहित अर्थात् अलग होये तब जीव अक्रिय है ॥ और पुद्गल द्रव्य सत्ता सक्रिय है ॥ इस रीतिमें नित्य अनित्य में चौभगी कही ॥ अर एक, अनर, पञ्चमे निश्चर (नि सन्देह) ज्ञान होनेके वामने नयना स्वरूप कहत हैं क्योंकि सर्व द्रव्यों में अनेक स्वभाव है मा एक वचन से कहन में जाने नहीं इसलिये नय कहनाही अवश्य है सो इन मातों तयके मूढ में तो दो भेद है ॥ १ द्रव्यार्थक । २ पर्यायार्थिक । पहले द्रव्यार्थक अर्थ करते हैं कि ॥ उत्पाद वय पर्याय गौणपने रम्ये और द्रव्यका गुण सत्तामें है उम सत्तामें ही ग्रहण करे उमका नाम द्रव्यार्थिक है सो इस द्रव्यार्थिकके (१०) भेद है मोही दिखाते हैं ॥ १ नित्य द्रव्यार्थिक सर्व द्रव्य नित्य है ॥ २ अगुण लघु क्षेत्र की अपेक्षा न करे एक मूल गुणको इरुद्धा ग्रहण करे सो एक द्रव्यार्थिक जैसे ज्ञानात्मिक गुण सर्व जीवना एक मगया है इस लिये सर्व जीव एक समान है ॥ ३ स्वय द्रव्यार्थिकना ग्रहण करे सा सत्य द्रव्यार्थिक जैसे (सत् लक्षण द्रव्यम्) ॥ ४ जो गुण कहने में आत्रे उम गुणको अगी कार करके कहे सा रक्तव्य द्रव्यार्थिक ॥ ५ अशुद्ध द्रव्यार्थिक जा अपना आत्माको अज्ञानी कहना कि मेरी आत्मा अज्ञानी है ॥ ६ सर्व द्रव्य गुण पर्याय सहित है इसका नाम अन्रय द्रव्यार्थिक है ७ सर्व द्रव्य मूल सत्ता

एक है इसका नाम परम त्रयार्थिक है ॥ ८ सर्व जावना आठ
रुचर प्रदश निर्मल है इसका नाम शुद्ध त्रयाधिक है ॥ ९ जाव
का अमंगलाता प्रदेश एक समान है इसका नाम सत्ता त्रयार्थिक
है ॥ १० गुण गुणी त्रय सौ एक है आत्मा ज्ञान रूप है इसका
नाम परम भाव ग्राहक त्रयार्थिक है ॥ इस रीतिसे त्रयार्थिके
दस भेद रह ॥ अत्र पर्यायार्थिक नयना अर्थ करत हैं कि पयायको
प्रहण कर उसको पयायार्थिक कहना सा इस पयायार्थिकक (६)
भेद है ॥ १ प्रथम त्रयपना अथवा सिद्धपना ॥ २ त्रय व्यजन
पयाय जपना प्रदश समान है ॥ ३ गुण पयाय यह एक गुणमें
अश्रुता होय जिस वमादि द्रव्य अपा चलनादि गुणसे अनक
जाव पुद्गलका सहाय कर है ॥ ४ गुण व्यजन पयाय यह एक
गुणक जनक भेद है ॥ ५ स्वभावा पयाय सा अगुण लघु यह
पयाय मत्र द्रव्य म हैं ॥ ६ व्यभाव पर्याय जात्र और पुद्गलमें
है क्योंकि व्यभाव पयाय हान सहा स्तन्द सब धनता है ॥ इस
रीतिसे (६) पयायार्थिकक भेद कहे ॥ इससे अलाव हमरी
रीतिमें भा पयायार्थिकक (६) भेद कहे हैं सा भी दिखाते हैं ।
१ जातिदि नित्य पर्याय जैसे मरु (सुमेरु) आदि है । २ सादी
नित्य पयाय जैसे सिद्धपना है । ३ अनित्य पर्याय जैसे समय ०
म द्रव्य उपज हैं और निनस हैं । ४ अशुद्ध नित्य पर्याय जैसे जन्म
मरण होता है । ५ उपाधा पयाय जात्र कमका सम्बन्ध है । ६
शुद्ध पयाय सब त्रयका मूल पयाय (अगुण लघु पर्यायका मूल
पयाय कहते हैं) एक सरासा है । इस रीति से पर्यायाधिकका
स्वरूप कहा । अत्र प्रथम (७) नयक नाम कहत है । १ नैगम
नय । २ सम्प्रहनय । ३ व्यवहार नय । ४ त्रु सुत्रनय ।
५ शब्द नय । ६ समभिरूढनय । ७ एव भूतनय । इस रीतिसे

सातो नयन नामकहे ॥ अत्र इन नयना विस्तारसे स्वरूप दिखा-
 ते हैं ॥ प्रथम नैगम नयका ऐसा अर्थ हाता है कि नहीं है गम
 जिसम उसका नाम नैगम है ॥ यह नय एक अश गुण उपजे
 अथवा आरोपान्वा सरूप मात्र करनेसे वस्तुको मान लेता है ।
 इस लिये इस जगह दृष्टान्त लिखाते हैं कि कोई मनुष्य अपन दिल
 में विचारने लगा कि (पायली) लाऊ मारवाडम (वान मापना
 अर्थात् तोलना उस एक काष्ठके परतनसे होता है उसका नाम
 पायली है) तत्र वो मनुष्य काष्ठ लेनेके वास्ते जगल अर्थात् वनमें
 गया उस वनमें जानेवाले मनुष्यकी सामने एक आता हुआ
 मनुष्य मिला सो उसने उससे पूछा कि तुम कहा जाने हो तत्र उस
 जानेवाले मनुष्यने कहा कि मैं पायली लेनेको जाता हू ऐसा कहा
 तो इस जगह विचारना चाहिये कि किस पुरुषने पायली लेनेका
 नाम कहा कि पायली लेनेको जाता हू तो पायली उस जगह कुछ
 वनी हुई नहीं रखी केवल काष्ठ लेनेकेही वास्ते जाता है सो काष्ठ
 का भी ठिकाना नहीं कि किस जगहमें काष्ठ लायेगा परन्तु मनमें
 ऐसा चिन्तवन किया कि मैं पायली लाऊ इस लिये उसने पायली
 कहा ॥ इसरीतिसे नयगम नयवाला मानता है ॥ क्योंकि देखो
 इस नैगम नयसेहा सर्वजीव सिद्धके समान हैं क्योंकि सर्वजीवके
 आठ रुचक प्रदेश निर्मल सिद्धके समान हैं इस लिये नैगम नय
 वाला सर्वजीवोंको मिथ मानता है ॥ सो नैगम नयके तीन भेद
 हैं ॥ १ अतीत अर्थात् भूतकालकी नैगम ॥ २ अनागत अर्थात्
 भविष्यकालकी नैगम ॥ ३ वर्तमान नैगम ॥ इस रीतिसे नैगम
 नय कहा ॥ अत्र सप्रह नय कहते हैं कि चत्ताको ग्रहण करे सो
 सप्रह । अथवा एक अश अत्रयवना नाम लेनेसे सर्व वस्तुको ग्रहण
 करे ॥ जैसे १ द्रव्य १ अश गुणका नाम लिया तत्र जितना उस

द्रव्यके गुण पर्याय थे भा सक्का ग्रहण कर लिय उसका नाम सम्रह है ॥ इस सम्रहनयका दृष्टान्त भा देखर दिखते हैं ॥ जैस कोई बड़ा आत्मा अपने घरके दरवाजे पर बैठा हुआ गौरसे कहे कि दातन तालाओ तब वी नाकर दातन ऐसा शब्द गुनकर दातोंके माजनेका मजन, धूची, जाभी, पानाहा लोटा, रुमाल, आदिमथ चीजें ले आया ॥ ता इम जगह प्रिचारना चाहिये कि उम बडे आदमीन तो एक दातन मागा था परन्तु जा दातन करनेकी सामग्री था उम सक्का सम्रह हो गया ॥ तैसही द्रव्य एसा नाम कहनेसे द्रव्यक जो गुण पर्याय थे सक्का सम्रह हो गया ॥ इम रीतिसे सम्रह नयकी व्यवस्था कही मो सम्रह नयक दा भेद हैं ॥ १ सामान्य सम्रह । २ विशेष सम्रह । सामान्य सम्रह उसको कहते हैं कि द्रव्य एसा नाम लेनेम जीव अजाव किसोका भेद न मागे और सक्का शामिलही मान लय ॥ विशेष सम्रह उसको कहते हैं कि किसीने जीव द्रव्य एसा कहा तो अजीव द्रव्य सर्व न्यारा करके एक जीव द्रव्यवेदा गुण पर्यायको ग्रहण कर ॥ इस रीतिसे सम्रह नय कहा ॥ अत्र व्यवहार नय कहते हैं ॥ बाल्य स्वरूपको दृग्गतर भेद कर क्योंकि व्यवहार नय जैसा जिनका व्यवहार देखे तैसाहा तिसका स्वरूप कहे अन्त रग स्वरूपको न माने इसलिये इस व्यवहार नयमें आचार क्रियाको दृग्गतर अन्त रगक परिणामको न जान अधानु न दख ॥ और गैगम तथा सम्रह नय वाला अन्त रग प्रणामको ग्रहण करता है ॥ और व्यवहार नयवाला केवल करणोंको देखता है ॥ इस लिय नैगम सम्रह नय वाला ता जावकी अनेक व्यवस्था है तो भा सक्का ग्रहण करके एक रूप कहताहै ॥ और व्यवहार नयवाला जावका अनेक व्यवस्था मानता है सोहा दिखते हैं कि ॥ पश्तर व्यवहार नयवाला जावके

दो भेद मानता है ॥ १ सिद्ध । २ ससारी । उस ससारी जीवके भी दो भेद मानता ॥ १ अयोगी चवदमें गुण ठाणे वाला । २ सयोगी । उस सयोगीके भी दो भेद हैं ॥ १ केवली तरवें गुण ठाणेवाला । २ छद्मस्थ । उसछद्मस्थके भी दो भेद हैं ॥ १ क्षीण मोही धारमें गुणठानेवाला । २ उपसान्त्र मोहवाला । उस उपसान्त्र मोहवालेके भी दो भेद हैं ॥ १ अकपाई अर्थात् क्रोध मान, माया, केरहित इग्यारमें गुणठानेवाला । २ सकपाई अर्थात् सूक्ष्म लोभ चाला । उस सकपाईके भी भेद हैं ॥ १ श्रेणी प्रति पन्न (श्रेणीका भेद अगाडी खुलाशा कहेंगे) अर्थात् ऊपरको चढनेवाला । २ श्रेणी करके रहित अर्थात् न चढनेवाला । उस श्रेणी रहितके भी दो भेद हैं ॥ १ अप्रमादी । २ प्रमादी । उस प्रमादीके भी दो भेद हैं ॥ १ सर्वविरातीवाला साधू । २ देश विरतिवाला श्रावक । उस देश विरतिवाले श्रावकके भी दो भेद हैं ॥ १ विरतिपरणामवाला । २ अविरति परणामवाला । उस अविरति परणामवालेके भी दो भेद हैं ॥ १ अविरति ममकित दृष्टि । २ मिथ्यात्वी । उस मिथ्यात्वीके भी दो भेद हैं ॥ १ अभव्य । २ भव्य । उस भव्यके भी दो भेद हैं ॥ १ ग्रन्थिकरके रहित । २ ग्रन्थि करके सहित । इस रीतिसे जैसा जीव देख तेसाही कह ॥ अब इसी व्यवहार नयसे पुद्गलका भी भेद दिखाते हैं कि ॥ पुद्गल द्रव्यके दो भेद हैं ॥ १ परमाणु । २ स्कन्ध । उस स्कन्धके भी दो भेद हैं ॥ १ जीव सहित अर्थात् जीवसे कर्म रूप पुद्गल लगा हुआ है । २ जीव रहित । जीव सहित स्कन्धके भी दो भेद हैं । १ सूक्ष्म । २ वादर । यहा वर्गणाका विचार लिखते हैं कि पुद्गलकी वर्गणा (८) है सो उनके नाम कहते हैं । १ औदारिक वर्गणा । २ वैक्रिय वर्गणा । ३ आहारकवर्गणा । ४ तेजसवर्गणा । ५ भाषावर्गणा । ६ उस्वासवर्गणा । ७

मनोवर्गणा । ८ कामण वर्गणा । यह आठ वर्गणां नाम कह अन
 इनकी व्यवस्था कहते हैं कि वगणा त्रिमूर्तिमे बनती है और
 कितन परमाणु इकट्ठे होनेसे घगणा होती है सो हा त्रिगुणते हैं ।
 दो परमाणु इकट्ठा (भला) हाता है तब द्विगुणन स्फुन्द बनता है ।
 तान परमाणु इकट्ठा होय तत्र त्रिगुणन स्फुन्ध होय ॥ चार मिले
 तो चतुर्गुणक स्फुन्ध होय । ऐसही सत्यात परमाणु इकट्ठे होय
 तो सत्यात परमाणुकार स्फुन्ध बने । ऐसेही असत्यात परमाणु
 मिले तो असत्यात परमाणुकार स्फुन्ध होय । अनन्ता परमाणु
 मिल तो अनन्ता परमाणुका स्फुन्ध हाय । यह अजीब स्फुन्ध
 जीवका ग्रहण करनन योग्य नहीं है । क्योंकि अभयसे अनन्त
 गुणा परमाणु इकट्ठा होय जन औदारिक वर्गणा लेनेके योग्य होवे
 जितने औदारिक वर्गणाम परमाणु इकट्ठे होय उनमे अनन्त गुण
 परमाणु इकट्ठे होय तत्र वैत्रियवर्गणा लेनेके योग्य होय । और
 वैत्रियवर्गणामें जितने परमाणु हैं उस वर्गणामे अनन्त गुण
 परमाणु इकट्ठे हाय तत्र आहारक वर्गणा होय । इस रीतिसे
 एक २ वर्गणासे अनन्त २ गुणा परमाणु ज्यादा २ मिलत हुए
 मनोवर्गणामें इकट्ठे हुए हैं उस मनोवर्गणामेभी अनन्त गुणे
 परमाणु मिल तत्र कारमान वर्गणा हाय । इस रीतिसे
 वर्गणाका विचार कहा । अब इन वर्गणाम भाग भेद हैं ।
 ॥ १ वादर । २ मृक्षम । पेशतर वादर वर्गणाका कन्ते हैं कि ॥ १
 औदारिक । २ वैत्रिय । ३ आहारक । ४ तेजस । यह चार वर्गणा
 वादर हैं ॥ इन वर्गणाम ५ घण, २ गन्ध १ रस ८ स्पर्श यह (२०)
 गुणहैं ओर चार वर्गणा सू म हैं १ भाषा २ उद्यास ३ मन ४ कारमान ।
 इन चार वर्गणाम ५ घण, २ गन्ध, ५ रस, ४ स्पर्श, यह (१६) गुण
 हैं ॥ और एक परमाणुम । १ वर्ण । १ गन्ध । १ रस । २ स्पर्श ।

यह पाच गुण हैं ॥ इस रीतिमें पुनःगलका व्यवस्था व्यवहारनय
 वाला मानता है ॥ और व्यवहारनय वाला व्यवहारके भा (६)
 भेद कहता है सोही दिखाते हैं ॥ १ शुद्ध व्यवहार । २ अशुद्ध
 व्यवहार । ३ शुभ व्यवहार । ४ अशुभ व्यवहार । ५ उपचारित
 व्यवहार । ६ अनूप चरित व्यवहार । ये व्यवहारके नाम कह अन
 इनका अर्थ करते हैं ॥ शुद्ध व्यवहार उसको कहते हैं कि
 नीचेके गुणगनेसे ऊपरका गुण ठाना लेय अर्थात् नीचे से
 ऊपरको चढे किसम कि आत्मगुणमे यह शुद्ध व्यवहार
 है अथवा जिज्ञासुक वाम्ने ज्ञान त्शन चारित्र जुदा २ कह कर
 समझाव तो भी यह शुद्ध व्यवहार है ॥ अत्र अशुद्ध व्यवहार
 कहते हैं कि जीवमे अज्ञानराग द्वेष है सो अशुद्धपना है इस अशु-
 ध्दकही चार भेद होत है ॥ (गोट) इस अशुद्ध व्यवहारको
 शामिल गिनतस (६) भेद होते हैं नहीं तो शुद्ध अशुद्ध दो भेद
 तो मुख्य है और शुभ अशुभ उपचारित अनुपचारित यह चार
 अशुद्धके अन्तर्गत हैं इस लिये ५ भेद व्यवहारक हाते हैं परन्तु
 इस जगद् जैसा इस आगमसारमे लिखा है वैसाही हमका कहना
 अशुभ्य है सा इसका विशय निणय हमारा किया हुआ (द्रव्य
 अनुभव रत्नाकर) मे देखो वो ग्रन्थ किसी कारणसे अभी पूर्ण नहीं
 हुआ क्यों कि बीच २ मे अवश्य प्रयोजनसे अन्य कई ग्रन्थ समाप्त
 होगय हैं और उन ग्रन्थोमे इस द्रव्य अनुभव रत्नाकरका नाम
 लिखा है इस लिये इस ग्रन्थमे मितो सम्बत पीछेसे दिया जायगा
 इस लिये जो कोई पाठकगण सन्देह करे कि ग्रन्थ तो पीछेसे रचा
 और साक्षी पश्तर देदीना इस मन्देह दूर करनेके वास्ते इतना नोटमे
 लिखना पडा) ॥ अत्र तासरा शुभ व्यवहार कहते हैं कि जो पुण्यरूप
 क्रियाका करना सो शुभ व्यवहार है ४ अशुभ व्यवहार उसको कहते हैं

कि जो पापरूप क्रियाएँ करना मो अशुभ व्यवहार है ॥ ५ उपचरित व्यवहार उसको कहते हैं कि यह कारण रूप घन कुटुम्ब घर प्रत्यक्ष अपनेसे जुदा है परन्तु जीव अज्ञान दशामें होकर अपना जानता है कि यह मेरा है इसलिये इसको उपचरित व्यवहार कहते हैं ॥ ६ अनुपचरित व्यवहार उसको कहते हैं कि शरीर आत्मा परबस्तु यद्यपि जीवमे शुद्ध निश्चयनयसे जुदा है परन्तु परिणामिक भाव लौलपीपनेसे अथवा इकट्ठा मिलनेसे तदात्म भावको प्राप्त हुआ है इस लिये अपना करक मानता है इस लिये इसको अनुपचरित व्यवहार कहते हैं ॥ इस रीतिसे व्यवहारनयका स्वरूप कहा ॥ अत्र ऋजु सूत्रनयका स्वरूप कहते हैं ॥ अतीत अर्थान् भूतकाल और अनागत अथात् भविष्यत काल इन दोनों कालोंकी अपेक्षा न करे और वर्तमान कालमें जिस वस्तुमें जैसा गुणपरिणमे अथवा यत्नैतिस वस्तुको तैसीही माने ऋजु सूत्रनयमें केवल वर्तमान परिणामकी अपेक्षा है न कि भूत भविष्यतकी अपेक्षा क्यों कि देगो जैसे कोई जीव गृहस्थ अस्थायी गहना कपडा श्रगार सहित बैठा हुआ है परन्तु अन्त रग परिणाम साधुके समान अर्थात् इन्द्रियोंके विषयसे अलग हारर आत्मगुणके चिन्तनमें लग रहा है तो उस जावको ऋजु सूत्रनय वाला साधु अर्थात् न्यागी कहगा ॥ और जो जाव साधुका भय अर्थात् ओषा मुख पत्ती नगे पग और नगे शिर लोचादि किये हुए है परन्तु समरे अन्तर-गचित्तमें इन्द्रियोंके विषय भोगनेकी अभिलाषा है उसको ऋजु सूत्रनयवाला अवृत्ता अपचरिताणी ग्रहस्थी कहेगान कि साधुका भेष देस कर साधु कहेगा ॥ इस ऋजु सूत्रनयमें केवल वर्तमानकी अपेक्षा है ॥ इस ऋजु सूत्रनयके दो भेद हैं ॥ १ सूत्रम ऋजु सूत्र । २ सूत्र ऋजु सूत्र । सा सूत्रम ऋजु सूत्र वाला वो एक

वर्तमान समयमें जैसा परिणाम होय । तैसाही माने । और दूसरा स्थूल ऋजु सूत्रनय वाला बाह्य परिणाम रूप वृत्तीको माने । परन्तु दोनोंमें कवल वर्तमान कालकीही अपेक्षा मानताहै नकि भूत भविष्यत कालकी अपेक्षा । इस रीतिसे ऋजु सूत्रनय कहा । अब शब्द नयका स्वरूप कहते हैं कि शब्द अर्थात् वचनसे कहनेमें आवे उसका नाम शब्दनय है क्यो कि शब्दनयमें एक तो व्याकरणका शब्द । २ भाषाया शब्द अर्थात् जो वचनसे कहनेमें आवे और वस्तु गुणरन्त होय अथवा निर्गुण होय और वचनसे नाम करके बोलनेमें आवे वो शब्दनयम है । इस शब्दनयके चार भेद हैं । १ नाम । २ स्थापना । ३ द्रव्य । ४ भाव । इन चार भेदकीही जिन मनमें निक्षेपा कहते हैं इस लिये इस शब्दनयमें अन्तर्गत चार भेद निक्षेपा रूप हैं तिनका विशेष करके विचार कहते हैं । प्रथम नाम निक्षेपा कहते हैं ॥ जिन वस्तुका आकार गुण न हाय और नाम करके बोलनेमें आवे उसका नाम निक्षेपा है क्यो कि देखो जैसे लडके लाग लकड़ीको लकर दानों पगीके बीचमें करके आवाज दते हैं कि हटजाओ हमारा घाडा आता है ऐसा वचन बोलते हैं परन्तु उन लडकोक पाममें कोई घाडके आकारकी वस्तु घाटेका गुण नहीं केवल नाम मात्र वचनसे उच्चारण करते हैं इस लिये वो लकड़ीका टुकडा नाम घाडा है ॥ अथवा कोई पुरुष कालीडोरी राहम गर कर किसीमें कहे कि साप (सर्प) है तो उस सापका नाम श्रवण करनेसे दूसर मनुष्यको भय लगता है परन्तु उस काली डोरीम सर्पका आकार और गुण कोई नहा परन्तु नाम सर्प हानेमेही भयका कारण होगया इस लिये वो नाम सर्प है इसका विस्तार आगे भी किंचिन् कहेंगे । इस रीति से नाम निक्षेपा कहा । अब स्थापना निक्षेपाका वर्णन

इसा नहीं लगती है इस मूर्ति त्रिपयका वर्णन विस्तार में देगना होय तो हमारा क्रिया हुआ (स्याद्वादानुभवरत्नाकर) के तीसरे प्रश्नके उत्तरमें विस्तार पूर्वक लिखा है वहा में दग्धा और जो कितनेही जिन आगमने अज्ञान और शसय मिध्यात्व वाले जो इस मूर्ति पृथनमें अल्प पाप और घटुत निर्भरा मानवे हैं उनका भी अज्ञान दूर करने के वास्ते उसी ग्रन्थ के चतुर्थ प्रश्न के उत्तरमें पूजन की विधी कह कर एकान्त निर्जरा ठहराई है सो भी वहा से देखो इमलिये स्थापनारूप मूर्त्ति को नहीं मानता है या त्रिराधक अर्थात् त्रिनाम्नाके बाहर है क्योंकि जिसन स्थापना निक्षेपा न माना तिसने द्रव्य भाव न माना जत्र द्रव्य भाव न माना तो ३ त्रिभेदा न माने जत्र तीन त्रिभेदा न माने तो सिध्दात भी न माने । जय मिध्यान न माना तो जिन आत्मासे आप ही बाहर होगया ॥ इस रीति से स्थापना निक्षेपा कहा । अत्र द्रव्य त्रिभेदेका वर्णन करत है कि त्रिमका नाम होय और आकार गुण होय और लक्षण मिले परन्तु आत्म उपयोग न मिले वो द्रव्य त्रिभेदा है । क्योंकि देखो जैसे जीव स्वरूप जाने त्रिना द्रव्य जाव है यह प्रत्यक्ष दरसनमें आता है कि मनुष्यकेसा शरीर आयु तार पान शकल लक्षण आदि दीखता है परन्तु अहं अर्थात् बुद्धि न हानेसे उसको लाग कहते हैं कि त्रिना सांग पैंउका पगु है एक देखने मात्र मनुष्य दीखता है क्याकि इसमें बाल चाल बँठक उठक बडे छोटे पनेका विचार न होने से पगक समान है । इस रीति से उपयागक त्रिना जा वस्तु है सा द्रव्य है एसा शास्त्रा में भी कहा है (अणुत्र उगोदघ) यह वचन अनुयोगद्वार सूत्र म कहा है और शास्त्रामें एसाभा कहतेहैं कि । पञ्चमर मात्रा शुद्ध उच्चारण

करे अथवा सिद्धान्तको धांचे वा पृष्ठ और अर्थ करे और गुरु गुरु से श्रद्धा रखे तो भी निश्चय सत्ता जाने बिना सर्व द्रव्य निवेपा में हैं ॥ इसलिये भाव बिना द्रव्यका जो करना है सां सत्र पुण्य बन्धनका हेतु है मोक्षका हेतु नहीं इस लिये जो कोई आत्म स्वरूप जाने बिना करना रूप कष्ट तपस्या करते हैं और जीव अजीवकी सत्ता नहीं जानते उनसे वास्ते भगवती सूत्रमें अवृत्ति अपधरानो कहा है ॥ और जो कोई एकली वाह्यकरनी अर्थात् किया करते हैं और अपनेमें साधूपना लोगोंमें कहाते हैं वो मृपावादी है क्योंकि श्रीउत्तराध्ययनगीम कहा है (नमुनिरणनासेण) इसका अर्थ ऐसा है कि वाह्य क्रिया रूप करनी अथवा जगलमें वाम करनेसेही मुनी अर्थात् माधू नदा होता किन्तु ज्ञानम साधू होता है सो उत्तराय यनजीमें कहा है यन् उक्त (नाणन यमुनी होई) इस वचनके कहनसे मादूम होता है कि ज्ञानी है सा मुनी है अज्ञानी है सो मिथ्याही है ॥ इस लिये जो ज्ञान सहित क्रिया का करनेवाला है सो ही मुनि अर्थात् साधू है ॥ अथवा कोई गणितानुयागमें नरक देवता आदिकी बाल बाल जाने अथवा चती श्रावक का आचार विचार जाने और त्रिवेक शून्य बुद्धिसी विचक्षणता से कहे कि हम ज्ञानी हैं सो ज्ञानी नहीं क्योंकि श्रीउत्तराध्ययनगी मोक्षमार्गाध्ययनमें कहा है (ग्यपच विहनाणद्वयाणय गुणाणयज्जराणयसज्जोसि- नाणनाणीहिदसीय) इसरीतिसे जब तत्र गुण पर्यायको न जाने और जीव अजीवकी सत्ता को न जाने तत्र तक ज्ञानी नहीं है जो नवतत्त्वका जान सो समकिसी है । क्याकि ज्ञान दर्शन त्रिन जो कहे कि हम वाह्य रूप क्रिया करनेसे चारीक्रिया हैं अर्थात् साधू वो सो मृपावादी है अर्थात् झूठा है क्योंकि श्रीउत्तराध्ययनगीमें कहा है कि (नाणभिदसणस्मनाणणाणन विणानहुत्ति चरणगुणान

धि अगुणियस्समुत्तमोधि अमाकरत्तस्मनिब्बयाण) इस वचनक
 कहनसे जा कोइ ज्ञान हीन क्रियाका आडम्बर दिग्गय कर
 भाले जीयाका अपने जालमें फसाते हैं सो जिनाजोके
 चौर महा ठग हैं उा ठगांका सग आत्मार्थ मव्यनोवको १
 करना चाहिये क्याकि यह बाह्य रूप करणी (क्रिया) अमव्य
 भी करते हैं इस लिय इस बाह्य रूप क्रियाको दग्कर उसके मिथ्या
 जाल में न फसना क्याकि आत्माका स्वरूप जाने बिना सामायक
 प्रतिस्मरणणपञ्चराण द्रव्य निक्षेपा में पुण्य बन्ध आश्रय है
 सम्बर नहीं क्योंकि श्री भगवती सूत्र में कहा है (आया रल्लु
 इय) इस वाक्यसे जान लेना क्योंकि जीव स्वरूप जाने
 बिना तप सयम क्रियादिक का कारणा फल पुण्य प्रकृता देवभव
 अथात् त्वता हानेके कारण है मोक्षका कारण नहीं यदि उक्त श्री
 भगवती सूत्र (पुब्बत्तवण पुव्व सयमेण देवलाएउववज्जतिनाचेवण
 आय भाव वत्तवयाए) इस लिय यह तप सयम बाह्य रूप ज्ञान
 बिना पुण्य बन्धाका हेतु है । अथवा कितने ही एक क्रिया लपि
 अथात् आचार करके हीन हैं और ज्ञान करक हान हैं और गच्छ
 की लजा (शर्म) स सूत्र पढत हैं और वाचत हैं अथवा उसी
 शर्म से वृत्त पञ्चत्तानादिक करते हैं व पुण्यभा द्रव्य निक्षेप म
 हैं क्योंकि श्री अनुयोग द्वार सूत्र में एसा कहा है कि (इमसण
 गुण मुत्त योगी छ्माय निरणुक्पा हया इन्दुहामा गया इवीर
 कुसा घठामठातुप्पोठा पइरया उरणाजिणाण आणारासछदा विह
 रिऊणउभऊ काल आवस्सगस्स उवठत्तिव लोगतारिय ध्यावस्सय
 अथात् ॥ जिन पुरुषोंको छ्मायक जानोंनी दया नहीं है और
 (घोड़ा) की तरह उन्मत्त हैं अथवा हाथीका तरह निर पु०
 हैं और अपन शरीरको सूत्र धाना मसलना सावू लगाना और

अच्छे २ सफ़द कपडा धोतीमे धुलाय वर पहराना अच्छी तरहसे शरीरका शृंगार करना और गच्छक ममत्व भाव मे फसे हुए म्वइच्छा चारी धीतरागकी आक्षाका भाजते (छाडत) हुए जो कोई तपस्यादिक् क्रिया करते हैं सो सर्व द्रव्य निश्रेषा में है । अथवा जातिप अर्थान् देवा जन्मपत्री वा वर्षफल बनाते हैं ग्रह गोचर बताते हैं । और वैदिक अर्थात् नाडीका देग्ना औपधि करते हैं (और अपनेको आचार्य उपाध्याय अथवा यती कहलाते है और लोगोंके पासमें अपनी महिमा करातेहैं वे लोग पत्नी बन्धा नात्रेका रुपयापरझोल फिरा हुआ) छोटे रुपयके ममान हैं और घणा ससारमें भ्रमण अर्थात् जन्म मरण करने वालेहैं इस लिये वे लाग अनन्दनीक हैं क्योंकि श्री उतराध्ययनजीके अनावी अध्ययने विस्तार पूर्वक लिखा है वहासे जानो । और जो कोई सूत्रका अर्थ गुरु मुखस मीसे विना और नयनिश्रपा प्रमाण जान विना अथवा निश्चय आत्म स्वरूप जाने विना और निर्युक्ति, भाग्य, चूर्ण, टीका, विना जा उपदेश देते हैं वे लोग आप ता ससारमें दूत्रते हैं और दूसरोंको दुनाते हैं क्योंकि जो उनके पास में बैठता है सोही दूत्रता है इसलिये उनका सग न करना क्योंकि जो जाने तत्र तत्र निर्युक्ति आदिक अथवा व्याकरण के शब्दको न जाने तो उपदेश न दे क्योंकि श्री प्रइन व्याकरण सूत्र और अनुयोग द्वार सूत्र मे ऐसा कहा है (अज्जत्थचेव सोलमम) इत्यादि जब तक सोलह रचन नहीं जाने तत्र तक उपदेश नहीं देवे । अथवा पचागोसमझे विना भी उपदेश न दें यदि उक्त श्री भगवती सूत्रमे (सुत्तयो रल्लु पढमोती उरियुत्तिमाम उमणि उइत्तो तईयणुउ गोनाणुत्ताठ जिणवरोई) इस रीति से कहा है तो फिर पचागीके विना भी उपदेश देना मिथ्या बात है इस लिये पचागी

को मानना अवश्य मेव है । अत्र यहा कोई विरक्त शून्य बुद्धि
 विचक्षण हाकर बाल कि हम सूत्र व ऊपर अर्थ करत हैं तो
 फिर नियुक्ति और टीकाका क्या काम है । ऐसा कहन वाला भा
 पुम्प महा सूत्र और मिथ्या वादी है क्योंकि श्रा प्रश्न व्याकरण
 सूत्र म ऐसा कहा है कि (वयणतियालगतिय) इत्यादि जाने
 विना और नय निशेषा जाने विना जो उपदेश दत्त हैं वे अवश्य
 मेव सृष्टा अर्थात् शृट मोलत हैं एसा अनेक सूत्रों म कहा है इस
 लिये बहु श्रुत अर्थात् पण्डितक पास में उपदेश सुन एसा श्री
 उत्तराध्ययना म कहा है कि बहुश्रुत मरु अथवा ममुद्र वा कल्प
 वृक्ष व समान है इस लिय आत्मार्थि भव्य जीव बहुश्रुतोक पास
 में उपदेश सुन कपटी वाचाल मूर्ख धूताक पास भ न जाय । इस
 रीतिसे नाम, स्थापना, और द्रव्य, य तीन निश्रपा कहे । अत्र
 मात्र निश्रपाका वणन करत ह कि । जिसका नाम होय आकार
 और लक्षण गुण सहित वस्तुमें मिल उस वस्तु म भाव निश्रपा
 होय क्योंकि श्रा अनुयोग द्वार सूत्र म कहा है (उपउगाभाव)
 इति वचन । इस लिये पूजा दान तप शीठ किया ज्ञान सब भाव
 निश्रपा सहित हाय तो लाभ वारी है । इस जगह कोई विरक्त
 शून्य बुद्धि विचक्षण ऐसा कहे कि मन परिणाम दृढकर व करे
 लसीना नाम भाव है एसा कोई कहता है वह सुरासी वाञ्छाका
 अभिलाषी है क्योंकि मिथ्यात्वा भी सुरासी वाठाक वास्तु मनका
 दृढकर के करत हैं ता वह मनका दृढ करना सा भाव नहीं इस
 जगह तो सूत्र अनुसार विधि आर वातरागी आनाम हय और
 उपादेय कहा है उसरी परात्वा करके अजाय आश्रय बन्ध ऊपर
 हेय कहते त्याग भाव और चायना स्वगुण मन्त्र निर्जरा मोक्ष
 उपादेय अर्थात् ग्रहण करनका भाव और रूपी गुण है तिसको

द्रव्य जान कर छोड़े जैसे मन, वचन, माया, लेश्यादि, सर्व पुद्गल-गलोक रूपी गुण जानकर छोड़े और ज्ञान, दर्शन, चरित्र, वीर्य ध्यान प्रमुख क्षीयका गुण सर्व अरूपी जान कर ग्रहण करे उसी का नाम भाव निक्षेप है । इसरीति से नाम स्थापना द्रव्य भाव महित लाभ कारी है विना भावके निरर्थक है । इस रीति से चार निक्षेप कहे । अब इन चार निक्षेपोंको कितनेहीएक वस्तुओंके ऊपर उतार कर जिज्ञासुआके समझने के वास्ते लिखाते हैं सो पेशतर जीवमें उतारते हैं । नाम जीव जैसे किसी जग अजीव वस्तुका कोई कहे कि यह जीव है । स्थापना जीव उसको कहते हैं कि (जीव) ये अक्षर लिखकर स्थापना करे अथवा चित्राम आदि मूर्ति बनाय । द्रव्य जीव उसको कहते हैं कि एकन्दिसे लेकर पंचेन्द्री पर्यन्त सर्व जीव हैं परन्तु सर्वका आपसमें उपयोग मिले नहीं इम लिये व द्रव्य जीव हैं । भाव जीव उसको कहते हैं कि जिसने अपना स्वरूप ओलखा (जाना) और समकित महित आत्म उपयोग में वर्ते है । इस रीतिसे जीव में रहे । अब धर्मास्तिकायम कहते है कि । धर्म ऐसा कहना सा वा नाम निक्षेप धर्मास्तिकाय ऐसा अश्वरोंको लिख कर स्थापना करना वा स्थापना है । द्रव्य धर्मास्तिकाय उसको कहते हैं कि अशक्यात प्रदेश हैं। भाव धर्मास्तिकाय उसको कहते हैं कि जिस वक्त जीव वा पुद्गलको चलनेमें सहायता करे उम वक्तमें भाव धर्मास्तिकाय कहना । इसी तरह अधर्मास्तिकाय आदि सर्व द्रव्योंमें जान लना । अब साधूमें चार निक्षेप उतार कर लिखाते हैं । जैसे किसी मनुष्यको साधू कह कर बोल वह नाम साधू है । स्थापना साधू उसको कहते हैं कि साधूकी मूर्ति वा चित्रामादि आकार यथावत् हाय । द्रव्य साधू उसका कहते हैं कि पंचमाहवृत्त पाळे और यथावत कपडोंकी

पीडलेहना (कपडोना देखना) आदि क्रिया अनुष्ठानादि करे
 और (५२) दूषण टाल कर अहार पाना लय इत्यादि शास्त्र
 अनुसार क्रियादि करे परन्तु मोक्षका साधन जो ज्ञान वा ध्यान
 आदि आत्म उपयोग यथावत् नहीं वह द्रव्य साधू है । भाव साधू
 उसको कहते हैं कि मोक्ष मार्गका साधे और ज्ञान ध्यान आत्म
 उपयोग सम्प्रदाय आदि गुणाको यथावत् साधे सो भाव साधू है ।
 अब अरिहन्तक ऊपर उतारते हैं कि जो किमी पुरुषका नाम अरिहन्त
 होय सो नाम अरिहन्त है । स्थापना अरिहन्त मी दरोग जिन प्रतिगा
 पापाण काष्ठ चित्राम आदि सत्र स्थानोंमें है । और द्रव्य अरिहन्त
 उनको कहते हैं कि जत्र तत्र केवल ज्ञान उत्पन्न न होय अर्थात्
 छद्मस्थ अवस्था रहे तत्र तत्र द्रव्य अरिहन्त है ॥ भाव अरिहन्त
 उसको कहते हैं कि जिनको केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ और लोका
 छे न जाने अथवा समोसरणम बैठ कर भय्य जीवोंका भाव
 प्रा न अर्थ उपदेश देय सो भाव अरिहन्त है । इसी तरह सिद्धा-
 दिने में जान लेना ॥ अब ज्ञानम चार निशेषा उतारते हैं ॥ नाम
 ज्ञान जैसा निसीका ज्ञान ऐसा नाम होय ॥ स्थापना ज्ञान पुस्तका
 में लिखा हुआ है अथवा ज्ञान ऐसे अक्षर लिखकर स्थापना करे
 वह स्थापना ज्ञान है ॥ द्रव्य ज्ञान जो उपयोग विना सिद्धान्तको
 पठन कर अथवा दूसरोको मुनाय वा अन्यमति अथा सत्र मत
 वालाक शास्त्राको जाने अथवा जैनमतक ३ अनुयोग आदि जाने
 वो द्रव्य ज्ञान है ॥ भाव ज्ञान उसको कहते हैं कि छ द्रव्य त्र
 तत्रको जानकर ' अजीव धन्ध आश्रव आदिनाका हय जानकर
 छोडे करल जीव द्रव्यका और मन्त्र निजरा भाव आदिकको
 उपादेय अर्थात् ग्रहण कर उसका भाव ज्ञान कहते हैं ॥ अब तप
 ऊपर भी उतारते हैं । ताम तप उसका कहते हैं कि जा किसी

का तब ऐसा नाम हो ॥ स्थापना तब उसको कहते हैं कि जो पुस्तकोंमें तपस्याको विधि लिखी है ॥ द्रव्य तब उसको कहते हैं कि पुण्य रूप बैठा तेजा चोला भास रामग आदि तपस्या करे वो द्रव्य तब है ॥ भाव तब उसको कहते हैं कि पर वस्तुके ऊपरमे ममत्व भाव न करना अथवा पर वस्तुका त्याग उसका नाम भाव तब है ॥ इसी रीतिसे स्मरण निर्भरा मोक्ष आदि जो कि ससारमें पदार्थ हैं उन मन्त्रके ऊपर निश्रेषा उतारते है सोही श्रीअनुयोग द्वार सूत्रमें कहा है । जल्ययज्ज ज्जागि ज्जानिकले निरिष्यो निर-
वसे सज्जयय भोज्जाणिन्नाचोक्त्रय निक्खिवेतय ॥ इस रीतिसे सिद्धान्तोंमें कहा है कि जो विशेष निश्रेषा उतारना न जाने तभी ये चार निश्रेषा तो अग्रय मेव हरणक, वस्तुमे उतारे इन निश्रे-
षोंका विशेष फयन हमारा क्रिया हुआ द्रव्य अनुभव रत्नाकरमें देगा ॥ इस रीतिसे चार निश्रेषा अर्थात् शब्द नय कहा ॥ अत्र छन सम्भिरूढ नय कहते हैं ॥ जिस वस्तुका कितनाही गुण तो प्रगट हुआ है और कितनाही नहीं हुआ परन्तु जो गुण प्रगट नहीं हुआ है सो गुण अग्रयमेव प्रगट होगा इसलिये उस वस्तुको सम्पूर्ण माने क्यों कि देखो जैसे केरल ज्ञानी १३ में गुणनने थाले को सिद्ध करे और तेरहवें गुण पाने वाला सिद्ध है नहीं किन्तु किन्तु शरीर समेत है परन्तु आयु कर्मवय होनेसे अवश्य मेव सिद्ध होगा इस लिये उसको सिद्ध कहा क्योंकि यह सम्भिरूढ नय वाला एक अग ओठी वस्तुको भी सम्पूर्ण वस्तु कहे ॥ इस रीतिसे सम्भिरूढ नय कहा ॥ अत्र एवभूदनय कहते हैं ॥ जो वस्तु अपने गुणमें सम्पूर्ण होय और अपने गुणही यथावत क्रिया करे उसीको पूर्ण वस्तु कहे क्या कि देखा जैसे मोक्ष म्यान पट्टवे हुए जीवमोही सिद्ध कहे । अथवा स्त्री पानीका घडा भरकर

सिरके ऊपर लाती हाथ उस वक्तमें घट अर्थात् घड़ा कह अन्य धारण्य हुआ घड़ा न कह इस लिय जो वस्तु अपने गुण नियामे यथावत् प्रवृत्ती है उस वक्त उसका वस्तु कह ॥ इस रातिमें ग्य भूत नय कहा ॥ इस रातिसे सातों नयोंका जुदा ० स्वरूप कहा ॥ अब इन साता नयोंका द्रष्टान्त आभनुयाय द्वारमें कहा है उसी रातिस इस जगह भी (७) नय उतार कर दिखात है ॥ एक पुम्पने दूसरे पुरुषसे पूछा कि तुम कहा रहत हा ता वा बोला कि म लोकमें रहता हू ॥ तब उसने कहा कि भाई लोकक तान भेद है ॥ एक ता अधो (नाचा) लोक और दूसरा उर्ध्व (ऊचा) लोक । तासरा तिठा (मध्य) लोक । इस लिय इन तानामस किस लोकमें रहता है ॥ तब वो बोला किम तिठा अर्थात् मध्य लोकमें रहता हू ॥ फिर उसने पूछा कि भाई मध्य लोकमें तो असरयाता द्वाप समुद्र है तू किस द्वीपमें रहता है ॥ तब वो बोला की म जन्तू द्वाप रहता हू ॥ फिर उसने पूछा कि भाई जन्तू द्वापमें क्षेत्र बहुत है तू किस क्षेत्रमें रहता है ॥ तब वो बोला कि मैं भरत क्षेत्रमें रहता हू ॥ फिर उसने पूछा कि भाई भरतक्षेत्रमें तो देश बहुत है तू कौनसे देशमें रहता है तब उसने कहा कि भाई मैं अमुक देशमें रहता हू ॥ तब उसने कहा कि भाई द्वाप तो ग्राम नगर बहुत है तू किस ग्राम नगरमें रहता है फिर उसने पूछा तब उसने कहा मैं अमुक नगरमें रहता हू ता उसने कहा कि भाई नगरमें तो मुहल्ला (बाड) अथवा गुवाडा (घास) इत्यादि बहुत हाते हैं तू किस मुहल्लाम रहता है ॥ तब उसने कहा कि मैं अमुक मुहल्लेमें रहता हू ॥ फिर उसने पूछा कि भाई मुहल्लेमें तो घर बहुत है त किस घरमें रहता है ॥ तब वो बोला कि मैं अमुक घरमें रहता हू ॥ यहा तक ता नैगम नय जानना ॥ अब

सप्रह नय वाला बोला कि तू कहा रहता है ॥ तब वो बोला कि मैं अपन शरीरमें रहता हूँ ॥ तब व्यवहार नय वाला कहने लगा कि मैं अपने रिशेना (आमन) पर बँठा हूँ इस जगह रहता हूँ ॥ तब ऋजु सूत्रनय वाला बोला कि मैं अपन अमरयाता प्रदेशमें रहता हूँ ॥ तब शब्द नय वाला बोला कि मैं अपने स्वभावमें रहता हूँ ॥ तब सम्भिरूढ नय वाला बोला कि मैं अपने गुणमें रहता हूँ । तब एव भूत नय वाला बोला कि मैं अपन ज्ञान दर्शनमें रहता हूँ । इसी रीतिसे ७ नयके ऊपर दृष्टान्त कहा । अब कोई पुरुष एक प्रदेश मात्र क्षेत्रको अगीकार करके पूछत लगा कि यह प्रदेश किसका है । उस वक्त नैगम नय वाला कहने लगा कि यह प्रदेश ठोस द्रव्यका है । स्यामि एक आकाश प्रदेशमें छोस द्रव्य रहते हैं इसलिये ठोस द्रव्य इकट्ठे हैं । तदा सप्रह नय वाला कहने लगा कि काल तो अप्रदेशी है । स्यामि सर्व लोकमें काल एक समय वर्तते हैं सो आकाशमें प्रदेश जुदा २ नहीं इसलिये ५ का है ६ का नहीं ॥ तब व्यवहार नय वाला कहने लगा कि जिस द्रव्यका मुख्य प्रदेश दाएँ उसी द्रव्य का प्रदेश है इसलिये सन द्रव्योंका नहीं । तब ऋजुसूत्र नय वाला कहने लगा कि जिस द्रव्य का उपयोग देकर पूछे उसी द्रव्य का प्रदेश है क्योंकि जो धर्मास्तिकाय का उपयोग देकर पूछे तो धर्मास्तिकाय का प्रदेश है अथवा अधर्मास्तिकाय का उपयोग देकर पूछे तो अधर्मास्तिकाय का प्रदेशक है । तब शब्दनय वाला बोला कि जिस द्रव्यका नाम लेकर पूछे उसी द्रव्यका प्रदेश कहना । तब सम्भिरूढ नय वाला कहने लगा कि एक आकाश प्रदेश म धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश और अधर्मास्तिकायका एक प्रदेश जीवका असरयात प्रदेश पुढाल परमाणु अनन्ता है । तब भूतनय वाला कहने लगा कि जिस प्रदेश में जिस द्रव्यको

क्रिया गुण करना हुआ दीये तिस समय तिस द्रव्यका प्रदेश है। इस रीति से प्रदेश में (७) नय कहे ॥ अत्र जीवमें (७) नय कहते हैं । नैगम नय वाला ऐसा कहता है कि गुण पर्याय और शरीर सहित ससारमें हैं सो सर्व जीव है इस नय वाले पुद्गल द्रव्य अथवा धर्मास्तिकाय आदिक सर्व जीव म गिना । तत्र सम-ह नय वाले ने पुद्गल द्रव्य अथवा धर्मास्तिकाय आदिक सर्व ह नय वाला बोला कि असंख्यात प्रदेश वाला जीव है । तत्र व्यव-हार नय वाला कहने लगा कि जो विषय लेवे कामादिक चित्तारे पुण्यकी क्रिया करे सो जीव इस व्यवहार नय वालेने धर्मास्तिकाय आदि और सर्व पुद्गल आदि छोडा परन्तु ५ इन्द्री मनलेश्या आदि सूक्ष्म पुद्गल शामिल लिया क्योंकि विषय आदिक तो इन्द्रिया लेनी है इसलिये थोडामा पुद्गल शामिल लेकर जीव कहा । तत्र ऋजुमूत्र नय वाला कहने लगा कि उपयोग वाला है सो जीव है इस नय वालेने इन्द्री आदिक पुद्गल ता न लिया परन्तु ज्ञान अज्ञानका भेद न किया ॥ तत्र शब्द नय वाला कहने लगा कि नाम जीव, स्थापना जीव, द्रव्यजीव, भाव जीव, इस नयम गुण निर्गुण का भेद न हुआ । तत्र समभिरूढ नय वाला कहने लगा कि जो ज्ञानादिक गुण वाला है सो जाव है इस नय वालेने मति ज्ञान और श्रुतिज्ञान जो सावक अस्थाना गुण है सो सर्व जावम शामिल किया । तत्र भूत नय वाला कहने लगा कि जो अनन्तरान अनन्त दर्शन अनन्त चरित्र, अनन्त वीर्य गुह्य मत्ता वाला है सो जीव है । इस नय वालेने जो मिद्ध अवस्थामें गुण है उस गुणमालेकाही जीव कहा । इस रीति से ही जीव में (७) नय कहे ॥ अत्र धर्मम (७) नय कह कर दिखात हैं । नय गम नय वाला बोला कि सर्व धर्म ह क्योंकि धर्म की

इच्छा सन कोई रखता है । तब सप्रह नय वाला कहने लगा कि जो बड़ (युजग) अथवा अपनी कुल जाति की मर्यादा से बाप दादे करते आये हैं सो ही धर्म है इस नय वाले ने अनाचार छोड़ा परन्तु कुलाचार को अंगीकार किया । तब व्यवहार नय वाला बोला कि जो मुत्सका कारण सो धर्म है इस नय वालेने पुण्य करणी को धर्म रूहा ॥ तब ऋजुसूत्र नय वाला कहने लगा कि उपयोग सहित वैराग्य रूप परिणाम सो धर्म है इस नयवालेन यथा प्रवृत्ति के करणका प्रणाम सर्व धर्म में लिया सो ऐसा वैराग्य रूप परिणाम तो मिथ्यात्वीका भी होता है ॥ तब शब्द-नय वाला बोला कि जिसको समकितकी प्राप्ति है सो धर्म है क्योंकि धर्म का मूल समकित है ॥ तब सममूर्ख नय वाला कहने लगा कि जोन अजीव और नव तत्व अथवा छ द्रव्य का जाननर अजीवना त्याग करे व जीव सत्ता को ग्रहण करे ग्मा जो ज्ञान दर्शन चारित्र साहेत जो प्रणाम वां धर्म है इस नय वालेन साधक और सिद्ध परिमाण धर्म में लिया ॥ तब भूत नय वाला कहने लगा कि शुक्ल ध्यान और रूपातीत परिणाम पक्षर श्रेणा कर्म नयकरने का कारण (हेतु) सो धर्म क्योंकि जीवका मूल स्वभाव है सो धर्म है उस धर्ममे ही मोक्षरूप कार्यकी सिद्धि होती है इसलिये जीवका जो स्वभाव सो धर्म है इम रीति मे जीवम (७) नय कहे । अन सिद्धिमें (७) नय कहते हैं । नैयागम नय वाला सर्व जीवों को सिद्धि कहता है क्योंकि सर्व जीवोंके (८) रुचक प्रवेश सिद्ध के समान है उन आठ रुचक प्रवेशों को कर्म कदापी नहीं लगता इसलिये सर्व जीव सिद्ध है । तब सप्रहनय वाला बोला कि सर्व जीवको सत्ता मिद्ध के समान है । इस नय वाले ने पर्यायिकनय

का अपक्षा ता छोड दा और द्रयार्थि नयनी अपक्षा अगीकार करी । तत्र व्यवहार नय वाला कहने लगा कि विद्या लक्षि चटक चमत्कार आदि सिद्धि जिस म होय मा सिद्ध है क्यानि यह व्यवहारनय वाला देखा दुई वस्तु को मानता है इसलिये वाद्य तप प्रमुख अनेक तरह की सिद्धि वाल जीवों को दिखा ने वाले हैं उनको सिद्ध मानता है इसलिये इस तय वाले ने वाद्य सिद्धि अगाकार करा ॥ तत्र ऋजुमूत्र नय वाला बोला कि जिसने सिद्धि सत्ता और अपना आत्माकी सत्ताओं लिखा अर्थात् जाना और उपयोग सहित जिस वक्त ध्यान मे अपने जीवको सिद्ध माने उस वक्त में या सिद्ध है इस नय वालेने क्षायिक समकित वाले का सिद्ध माना । तत्र गहनय वाला कहने लगा कि जो शुद्ध शुक्ल ध्यान रूप पारणाम और नामादि निशेषा स हाय सा सिद्ध है । तत्र समभिन्दनय वाला बोला कि जा केवल ज्ञान कल दर्शन यथा स्यात् चारित्र आदि गुणवन्त होय सा सिद्ध है इस नय वाल न १३ वें गुण ठाने वा १४ वें गुणठाने वाल केवली का सिद्ध कहा ॥ तत्र भूतनयवाला कहने लगा कि सरल कर्म शय करके लोकके अन्तम विराजमान अष्टगुण करके सयुक्त सो सिद्ध है । इस रीतिसे सिद्धमें (७) नय कहे । इन सातों नया का जो मिला हुआ वचन माने और एक नय का न उच्चावे सो समकता अर्थात् जिन धर्मी हैं और जो इन सातों नयमें स एक नयका भा बढाय दय सो मिथ्यात्वी । इसलिये माता नयका जो वचन है सो तो प्रमाण हे । और जो एक नयका वचन है सा अप्रमाण इस रीति से एक अनेक पक्ष कहा । अत्र सत्य असत्य पक्ष से प्रमाणका निरूपण करते हैं सो प्रमाणने दा भेद हैं ॥ १ प्रत्यक्ष प्रमाण । २

पराश्र प्रमाण । प्रथम प्ररोश्र प्रमाणका स्वरूप कहते हैं कि जीव केवल ज्ञानको प्राप्त होकर उस केवल ज्ञानके उपयोगसे सर्व द्रव्या का जाने उनको पर्यायोको जान और भूत भविष्यत् वर्तमान काल की सर्व बातें एक समय में अर्थात् एक कालमें जाने उसका नाम प्रत्यक्ष ज्ञान है सो कवल ज्ञान तो सर्व प्रत्यक्ष है ॥ और मन पर्यव ज्ञान और अविधि ज्ञान ये दो ज्ञान दश प्रत्यक्ष है ॥ क्योंकि मन पर्यव ज्ञानगाला ता टारि द्वैपरु जा सर्वापश्वेन्द्राजी व हैं उनर मनरा वातना जानन गाला है और सर्व की वात का जानन गाला नहीं इस लिये उसको दश प्रत्यक्ष कहा ॥ और दूसरा जा अर्थात् ज्ञान मो पुगल द्रव्यका प्रत्यक्ष जानता है और को नहीं इस लिये यह भी दश प्रत्यक्ष है ॥ अत्र दूसरा परोश्र प्रमाण का स्वरूप कहते परोश्र प्रमाण मय छद्मन्व जीवा को होता है सो इस परोश्र प्रमाण में एक तो मति ज्ञान है दूसरा श्रुत ज्ञान है मो मति नाम बुद्धि से जा जाना जाय सो ता मति ज्ञान है ॥ और श्रुति अर्थात् शास्त्रोंमें जाना जाय सो श्रुत ज्ञान है ॥ सो मति ज्ञानका तो शास्त्रोंमें अनेक जगह वर्णन किया है इस लिये इस जगह न किया ॥ और श्रुति ज्ञान अर्थात् परोश्र ज्ञान है उसको परोश्र प्रमाण कहत है ॥ सो उस परोश्र प्रमाण के चार भेद हैं ॥ एक तो इन्द्रा आदिक में प्रयत्न होना ॥ दूसरा आगम अर्थात् शास्त्रका प्रमाण ॥ तीसरा अनुमान प्रमाण ॥ चौथा उपमान प्रमाण ॥ अत्र इन चारों भेदों में से एक भेद काममहा-त्ते हैं सो पेश्वर इन्द्रा प्रतिश्र प्रमाण का परोश्र प्रमाण में समगते हैं इन्द्रा इसको कहते हैं कि जैसे पांच इन्द्रा जपन २ विषय की तुला प्रत्यक्ष जानती है इस लिये यह इन्द्रा ज्ञान जैन धर्मके विना सर्व मतवाल प्रत्यक्ष प्रमाणमें इन्द्रियों से विषयका प्रत्यक्ष होना इसीको

प्रत्यक्ष ज्ञान मानते हैं इस अपेक्षा से इसको प्रत्यक्ष ज्ञान कहा परन्तु आत्म ज्ञान प्रत्यक्ष नहीं इस लिये यह (इन्द्रो प्रत्यक्ष) प्रत्यक्ष प्रमाणमें नहीं किन्तु परोक्ष प्रमाणमें है ॥ अत्र आगम प्रमाण कहते हैं कि जो शास्त्रों में लिखा है उसको अगाकार करना उसका नाम आगम प्रमाण है क्योंकि ऐसा जैसे देवलोक और नरक आदि वको अथवा और भी ऐसी वस्तु है कि सर्वज्ञके बिना दूसरा देव न सके और उन वस्तुओंका शास्त्रोंमें नाम है उन वस्तुओंको मानना उसीका नाम आगम प्रमाण है ॥ अत्र अनुमान प्रमाण कहते हैं कि लिंग देवनेसे लिंगीका ज्ञान होय उसका नाम अनुमान प्रमाण है क्योंकि देवों जेमे धुआ देवनेसे अग्नि का ज्ञान होना सो अनुमान प्रमाण है ॥ उपमान प्रमाण उसको कहते हैं कि जो किसी वस्तुको किसी वस्तुकी उपमा देकर समझाव कि इस वस्तुके सदृश्य फलानी वस्तु होती है ऐसा जो उसको निराय कर समझाय देना सो उपमान प्रमाण है ॥ इसरीतिसे प्रमाण का वर्णन किया और सत्य असत्य पक्ष भी इस जगह समाप्त हुआ ॥ और वक्तव्य अवक्तव्य सहित सत्य असत्य पक्षमें सप्त भागो कहते हैं सो प्रथम(७)भागोंक नाम कहते हैं । १ स्यात् अस्ति । २ स्यात् अस्ति नास्ति । ३ अस्ति स्यात् नास्ति । ४ स्यात् अवक्तव्य । ५ स्यात् अस्ति अवक्तव्य । ६ स्यात् नास्ति अवक्तव्य । ७ स्यात् अस्ति नास्ति युगपत् अवक्तव्य ॥ इसरीतिसे सात भागोंके नाम कहे ॥ अत्र प्रथम स्यात् अस्ति भागोका अर्थ कहते हैं कि स्यात् कहता अनेकान्तपने सर्व अपेक्षा सहित जीव द्रव्यम अपना द्रव्य, अपना क्षेत्र, अपना काल, अपना भाव करके अस्ति है जैसे जीव अपने गुण पर्याय करके अस्ति है तैसे ही सर्व द्रव्य अपने २ द्रव्य क्षेत्रकाल भाव करके अस्ति है ॥ और दूसरे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, करक नास्ति है । इसलिये

अपन गुण पर्याय करके अस्ति पना है इसलिये स्यात् अस्ति है ॥
 अत्र स्यात् नास्ति भागा कहते हैं जिसद्रव्यमें अपना द्रव्य क्षेत्रका
 लका भाव करके तो अस्तिपना है दूसरे द्रव्यके द्रव्य क्षेत्रकाल
 भाव करके नास्ति पना है तो जिस द्रव्यमें अस्ति पना है उसी द्रव्य
 में दूसरे द्रव्यकी अपक्षा से नास्ति पना है इस रीति से दूसरा भागा
 हुआ । अत्र स्यात् अस्ति स्यात् नास्ति तीमरा भागा कहते हैं कि
 जिस समयमें अस्ति गुण है उमी समयमें नास्ति गुण है इस लिये
 स्यात् अस्ति स्यात् नास्ति तीमरा भागा हुआ ॥ अत्र स्यात् अवक्तव्य
 चौथा भागा कहते हैं कि जिस समयमें अस्ति है उमी समयमें
 नास्ति है तो दोनों गुण एक समय होनेसे वचन से कहना नहीं
 आता क्योंकि अस्ति गुणको कह तत्र तत्र असल्याता समय लगे
 तत्र नास्तिपनेका पृथा अर्थान् झूठ लगे इस लिये अवक्तव्य कहा
 क्योंकि स्वयं गुणसे अस्तिपना और परगुणसे नास्ति पना ये दोनों
 एक हैं परन्तु दोनों गुणको वचनसे एक साथ नहीं कह सके
 इस लिये यह चौथा अवक्तव्य भागा कहा । अब स्यात् अस्ति
 अत्रक्तव्य और स्यात् नास्ति अवक्तव्य यह दोनों भागोंको शामिल
 कहते हैं कि चौथे भागमें जो अवक्तव्य उससे सन्देह उत्पन्न हुआ
 कि अस्तिपनेका अवक्तव्य है अथवा नास्ति पने का अवक्तव्य है इस
 सन्देह को दूर करनेका वास्ते दोनों भागों अवक्तव्य कहे क्योंकि देखो
 वस्तुमें अस्ति गुणभी ऐसा है कि उस गुणको जान तो ले परन्तु
 वचनसे नहीं कह सके इस लिये अस्ति अवक्तव्य कहा तैसेही
 नास्तिमें समझ लेना इस रीतिमें दोनों भागों कहे । अब सात मा
 स्यात् अस्ति स्यात् नास्ति युगपत् अवक्तव्य भागा कहते हैं कि एक
 समयमें अस्तिपना और नास्तिपना है तो दोनोंको एक समयमें
 कह नहीं सके इस रीतिसे सातवा भाग हुआ ॥ इस सप्त भागोंका

प्रतिपादन हमारा किया हुआ (स्याद्वादानुभावात् रत्नाकर) चौथे प्रश्न उत्तरम युक्ति दृष्टान्तस कथन किया है सो उसमें त्रयो और उससे भी विशेष (द्रव्य अनुभव रत्नाकर) में है। जिस रीति से यह सप्तभगी कह आये हैं उसी रीति से म्यात् नित्यस्यात् अनित्य अथवा स्यात् एक, स्यात् अनर, इस रीतिकी अनर सप्तभगी उत्पन्न होता है सो बुद्धिमान पाठरगण अपनी बुद्धिसे जान लेना। और यह सप्तभगी सिद्धम घटती है और सिद्ध पदमें नय आदि नहीं घटती है। इस रीति से सप्तभगी कही। अब सत्ता पञ्चान करानक वास्ते त्रिभगी कहते हैं। १ वाधर। २ साधर। ३ सिद्ध इन तीनोंका अर्थ करते हैं। वाधर दिशा (अवस्था) तो मिथ्यात्वी जीवकी है। और साधर अज्ञान समकक्षासे लकर कवली पर्यन्त अथवा १४ वे गुण ठानतक साधर दिशा है। अब सिद्ध दिशा कहते हैं कि सकल कर्म से और ज्ञान दर्शन चारित्र्य वार्ध सयुक्त लानके अन्तम विराजमान सो सिद्ध है ॥ ज्ञान। ज्ञाता। ज्ञय। इत तीनोंका अध करते हैं। ज्ञान तो जीवका गुण है कि ज्ञान म गुण से जाने। अर ज्ञाता जीव अर्थात् जानने वाला जीव है। अर ज्ञय सर्व द्रव्यका जानना। इस रीति से ज्ञान ज्ञाता ज्ञय कहा। अब ध्यान। ध्याना। ध्यय। इन तीनोंका अर करते हैं। ध्यान तो जीव स्वरूपका चिन्तवन ॥ ध्याता नीर। ध्यय आत्म स्वरूप। इस रीतिसे ध्यान ध्याता ध्यय तीनों कह। अब कर्त्ता। कर्म। इन दोनाका भी अर्थ करते हैं। कर्त्ता तो एक जीव है। और कर्मक रू भेद हैं ॥ १ म धर। २ बन्ध। उम कमकी क्रिया भी टा हैं ॥ मोक्षकी क्रिया तो सम्बर है ॥ और बन्धकी क्रिया आश्रय है ॥ कर्म चेतना कम बन्ध परणाम और कर्म पञ्च चेतना कर्म उदयना]

परिणाम । ज्ञान चेतना जीवका स्वयं गुण । और आत्मा के तीन भेद हैं ॥ १ बाह्य आत्मा । २ अन्तर आत्मा । ३ परमात्मा । इन तीनोंका अर्थ करते हैं ॥ प्रथम बहिर आत्मा तो उसको कहते हैं कि जो अज्ञानपनेसे घर कुटुम्ब स्त्री पुत्र कलत्र आदि अथवा शरीरादि पर वस्तु में आत्म बुद्धि करनेवाला जीव बाह्य आत्मा है । अन्तर आत्मा उसको कहते हैं कि जो जीव देह सहित है परन्तु शरीरसे अलग नि सन्देह आत्म गुण सिद्धके समान जाने और अपनी आत्मानो सिद्धके समान मान कर ध्याये सो अन्तर आत्मा है । अत्र परमात्माना अर्थ करते हैं कि चार कर्म पाती अर्थात् ज्ञाना वर्णि दर्शनावर्णि, माहनी, और अन्तराय इन चारोंको क्षय करके ब्रह्म ज्ञान उत्पन्न करे अथवा अष्ट कर्म क्षय करके सिद्ध अस्त्राको प्राप्त होय ये दोनों परमात्मा हैं । इस रीतिसे त्रिभोगी आत्मिका विचार कहा इसलिये इस जगह आठ पञ्चका विचार सम्पूर्ण हुआ । अत्र एक २ द्रव्योंमें छ २ गुण सामान्य सो उन सामान्य गुणोंका दिग्गते है मा पेशर छ सामान्य स्वभावाका नाम कहते हैं ॥ १ अस्तिव कहता अस्तित्वना है । ५ वस्तुत्व कहता वस्तुपना है । ३ द्रव्यत्व कहताद्रव्यपना है । ४ प्रमेयत्व कहता प्रमेयपना है । ६ सत्त्व कहता सत्यपना है । ६ अगुणत्व कहता अगुरु लुपना है । यह छ सामान्य गुण सर्वे द्रव्योंमें है । प्रथम अस्तित्वादिपाते है कि यह छ द्रव्य अपने गुण पर्याय प्रवेश करके अस्ति है और पाच द्रव्य अस्तिकाय हैं और काल द्रव्य अस्तिकाय नहीं है क्या कि देखो वर्म, लघर्म, आकाश, जीवने असत्प्राय प्रदेज शामिल होकर स्फुट पनना है । और पुद्गलम भी गन्ध पननकी शक्ति है इसलिये यही अस्तिकाय है । और काटका समय त्रिमी दूसरे समयमें मिले नहीं -

समय त्रिनसे है वो समय भूत भविष्यत किसी कालमें मिले नहीं इसलिये काल अस्तिकाय नहीं है और पाच द्रव्य अस्तिकाय है। इस रीतिसे इनका अस्तिकपना कहा। अब दूसरा स्वभाव कहते हैं कि वस्तुपना क्या है सोही दिखाने हैं कि। यह छठो द्रव्य एक क्षत्रमें शामिल अर्थात् इक्ठे रहते हैं क्योंकि एक आकाश प्रदेशमें धर्मास्तिकायका एक प्रदेश। अधर्मास्तिकायका एक प्रदेश। जीव का अनन्ता प्रदेश। और पुद्गल परमाणु अनन्ता, रहता है परन्तु अपनी २ सत्तामें रहता है और दूसरेकी सत्तामें मिले नहीं इस लिये इनमें वस्तु पना कहा। अब तीसरा द्रव्य पना कहते हैं कि यह छठो द्रव्य अपनी अपना क्रिया करते हैं जो अपनी जुदी क्रिया कर सा द्रव्य हा दिखाते हैं कि। धर्मास्तिकायमें मुख्य चलना सहाय गुण है सो धर्मास्तिकायके कुल प्रदेशोंमें है सो वो चलन सहाय गुण सदा काल जीव और पुद्गलको चलनेमें सहाय देनेकी क्रिया करता है। अब इस जगह ऐसी शका होती है कि जो धर्मास्तिकाय जीव और पुद्गलको चलनेमें सहाय देती है तो सिद्ध क्षेत्रमें जो सिद्धके जीव उनका क्यों नहा चलाती है। इसका समाधान ऐसा है कि जो जीव पुद्गल चल उस वक्तमें धर्मास्तिकाय सहाय देती है जो नहीं चलनेवाला है उनका सहाय नहीं देती सो सिद्धके जीव अचल अविनाशा अक्रिय हैं इस लिये व सिद्ध पुरुष चल नहीं तो फिर धर्मास्तिकाय क्योंकर सहाय देय इसलिये धर्मास्तिकाय सिद्धके तारोंको सहाय नहीं देती है परन्तु जो उस सिद्ध क्षत्रम निगोदने जाव है और पुद्गल परमाणु हैं उन सबको सदा काल सहाय देती है। इसी रीतिसे अधर्मास्तिकाय ताव पुद्गलको स्थिर करनकी क्रिया करती है। और आकाश द्रव्य सर्वद्रव्योंके वास्तव अवगाहना अर्थात् जगह

देनेकी क्रिया करता है । इस जगह कोई ऐसी शक्ति है कि
 अलाक आकाश में कोई दूसरा द्रव्य नहीं है तो फिर वो किसके
 वास्तव अवकाश अर्थात् जगह देता है । इस शक्ति का ऐसा समाधान
 है कि अलाक आकाश में कोई दूसरा द्रव्य नहीं है तो किसका अज-
 वाहना नाम जगह देय इसलिये उस अलाक आकाशकी शक्ति तो
 अजवाहना अर्थात् जगह देनेकी है परन्तु उस जगह द्रव्य के न
 होनेसे क्या उसकी शक्ति कहा चली गई सो तो नहीं क्यों कि देगो
 जैसे बाल विधवा स्त्री है उसको पुरुषका संयोग न होनेसे सन्तान
 की उत्पत्ती नहीं तो क्या उसको गर्भ्या कहना सम्भव है सो तो
 नहीं किन्तु बालविधवा कहेंगे गर्भ्या स्त्री नहीं रहेंगे ऐमेही उस
 अलाक आकाशमें भी अजवाहन शक्ति गुण है । ऐमेही पुष्कल
 द्रव्य भी मितना और जुदा होना अपनी क्रिया करता है । ऐसे
 ही काल द्रव्य भी अपने वर्तना रूप क्रिया करता है । और जीव
 द्रव्य भी ज्ञान लक्षण उपयोग क्रिया करता है । इस रीतिसे यह
 छद्म द्रव्य अपने ० परिणामकी क्रिया कर रह है । इस रीतिसे
 द्रव्यपना कहा । अब प्रमेयपना कहते हैं । केवली भगवान् अपने
 ज्ञानसे छ द्रव्य देता और मिलाया कि यह छद्म द्रव्य कौन
 कौन किन्ता ० है सो उन छद्मों द्रव्योंका मान अर्थात् प्रमाण
 कहते हैं । धर्माभित्वाय एव द्रव्य है । ऐमेही अधर्मास्तित्वाय
 एव द्रव्य है । और आकाशास्तित्वाय भी एव द्रव्य है और जीव
 अतः ता है सो उस जीव अनन्तोंकी गिनती कहते हैं कि । सत्री
 मनुष्य सग्याता और असत्री असख्याता । नारकी (नरक)
 असरयाता । देवता अमग्याता । त्रियच पञ्चेन्द्री असरयाता ।
 ये इन्द्री जीव अमरयाता । ते इन्द्री जीव असग्याता । चारिन्द्री
 जीव असरयाता । प्रविक्रयाय असग्याता । अप्पकाय अर्थात् जल

य जीव असग्याता । तउवाय अर्थात् अग्निये जीव असग्याता ।
 वायुनाय अथान् हवाय जाय अमर्याता । प्रत्यय मनस्पतार जीव
 अमर्याता । तिनमे सिद्धसा जीव अनन्ता । तिम सिद्धक जीवमे
 वादर निगोदसा जीव अनन्त गुणा सा वादरनिगात् उसका
 कर्ते हैं कि मूत्रा, अदरक, गाजर, सूरन (जमाक),
 फूलन, (फफुलन), प्रगुरा सत्र वादर निगोदमें हैं मा इम
 वादर निगाद् ४ एक मूई क अग्रभाग टुकड में अनन्ता जीव
 हं सा सिद्ध जाय स भा अनन्त गुणा हं । और मूद्म निगाद् इस
 म भा सूदन हं सो उम मूद्म निगाद् का विचार कर्ते हैं कि
 निना लोर आकाश का प्रदेश हं उतनाही निगोद का गोला
 ४ उमएक गोला म असग्याता निगोत् हं । निगाद् उसको कहत
 हैं कि निसम अनन्त जाय का विडरूप एक शरीर हाय उसका
 नाम निगात् ह । सो उस निगोत् म अनन्त जीव हं एम अनन्त
 जीव की विचिन् कल्पना करके दिखाते हैं कि भूतकाल क
 निने समय होय उन सर्प समयों की गिनित कर और अनागत
 अयात् भविष्यत काल का जितना समय हाय वा सत्र भला (इकट्टा)
 कर आर उतना अनन्त गुणा कर जितना वा अनन्त गुणा
 करेका पड होय एतन जीव निगात् म हं इमलिये एक निगात्
 म जनन्ते जाय हं । सा उम ससारा जाय क अनर्यात प्रेश
 एक जाय म हं । सा उस एक २ प्रदेश म अनन्ता कम बगणा
 लग रही हं । सा एत एक २ कम वर्गणा म अनन्ता पुद्गल
 परमाणु हं और अनन्ता पुद्गल परमाणु जाय म लग रहा हं ।
 और अनन्त गुणा परमाणु जीव स गहित प्रर्थी अलग परमाणु
 रूप ह अत्र विचिन् जावता मान कहत हं ॥ गाथा ॥ गोलाय
 नसखिज्जा असय निगाय ऊहवइ गोला इति कसि निगारा आयत

जात्रा मुण यत्रा ॥ अर्थ ॥ निगोद में असख्यान् गाला है उस एक २ गोला में असख्यात् निगोद है उस एक २ निगोद में अनन्ता २ जीव हैं ॥ गाथा ॥ सत्तरससमहित्रा किम्बुगाणु पाण मिन् विगुडु भवामगति ससयतिदुत्तर पाणु पुण्डेग मुहुत्तमि । अथे निगोदना जीव मनुष्य के एक स्वाम मे (१७) भव अर्थात् जन्म मरण दुःख एक अधिक करता है और एक मुहूर्त में मात्रा पचेन्द्री मनुष्य के ३७७३ उन्मास होत हैं ॥ गाथा ॥ पण रितिस हस्तपणसय उत्तिसाईग मुहुत्त गुहुभरा आपलियाण दासय उपत्राणा गुहुभवे ॥ अर्थ ॥ निगोदनाला जीव एक मूर्त में (६५५३६) भव करे है और उस निगोद बाल जात्रका (२५६) आपला प्रमाण आयुष्य हाती है यह खुल्लक अर्थात् छोटेसे छोटा भव होता है भव अर्थात् जन्म मरण इस निगोद बाल जीव मे कमता आयुष्य और किसीकी नहीं होता ॥ गाथा ॥ अरिथ अणता जीवा जेहिंन पत्तोत माइपरिणामो उव वज्जति चयनिय सुणोवितत्थेउ तत्थेउ ॥ अर्थ ॥ निगोद म ऐसा जीव अनन्ता है जिसने तसपना क्वापि नहीं पाया अनन्ता बाल पीत गया और अनन्ता बाल पीत जायेगा और जो जीव उसी जगह चारम्बारा जन्म मरण करेगा और उस जगह बना रहेगा ऐसा निगोद में अनन्ता जीव है । सा उस निगोद म के दो भेद है । १ ज्यवहार राशि । २ अज्यवहारराशि । सो ज्यवहारराशि तो उसको कहते है कि जो जीव पंचेन्द्री वादरपना अथवा तसपना पाय कर फिर पीठा उमी निगोद में जाय पहा उसको ज्यवहार राशि कहते हैं और जो जीव पदापि निगोद मसे निजल कर यात्र एवेन्द्री पना अथवा तसपना नहीं पाया और अनादि काह में उसी जगह जन्म मरण करता है उसको अज्यवहारराशि कहते हैं । अन्तु,

इस व्यवहारर्राणि में स जितना जाव मोअ जिस समय में जायगा उतनाहा जाव उस समय में अव्यवहारर्राशि मेंसे निकल कर ऊँचा अर्थात् व्यवहारर्राणि में आ जायगा । इस रीतिसे निगोदका विचार कहा । उस निगोदका असग्याता गोला है सो वो निगोद बान गाला क जाव उ दिगा का पुद्गलाक अहारपणे लेठे है सो छ दिगा का अहार जन वाले मकल गाला कह्यात हैं । और जो तार के अन्त प्रदेश में निगोद के गाला हैं उन क जीव तान दिशा का अहार फरसते हैं सा प्रिण्ड गोला है । और सूक्ष्म निगोद में एक स धारण घनस्पता स्थावर मेंही सूक्ष्म जाव हैं सो वह सूक्ष्म सर्व लोच में भरा हुआ है जैसे वाजलकी कोपली भरी हुई है तैसही साधारण घनस्पती सूक्ष्म निगोद वाले जीवों में भरा हुई है । और चार स्थावर म ऐसा सूक्ष्म पना नहीं है इस सूक्ष्म निगोद में रहने वाले जीवको अनन्ता दुख का द्रष्टान्त देकर दिग्गते हैं कि । जो जीव पापादिक के फलन सं (७) में नरक में जाता है उस सात में नरक जाने वाले जीवका (३३) सागर का आयुष्य होती है ना उस ३३ सागर क नितन समय होय उतनीही बार सातों नरक म जाय उस नरका में छदन भेदन मारकूट का होता है उस दुखको मय इष्टा कर अर्थात् सैतास २ सागरकी आयुष्य पान जितना दुख सब दर्शना मिलाय कर इकट्ठा करे उतना दुख निगोद बान जीवको एक समय में होता है । अब दुमरा द्रष्टान्त और भी दिग्गते हैं कि । मनुष्यक साठे तीन फाटि रामावता हाता है उतनाहा काई देवता लोहे की माढती कोटि सुन बनाय और उनका अग्नि म तपाय कर देवता अपनी लब्धि से एक साथ छद जितना दुख उस छदन से होय उस से भी अनन्त गुणा दुख उस निगोद वाले जावका होता है

सों उस निर्गोदका कारण अज्ञान है। इस लिये हे भव्य प्राणियों उस अज्ञान को छोड़ो और ज्ञान को ग्रहण करो। इस रीतिसे निर्गोदका विचार और सर्व द्रव्य का प्रमेयपना कहा। अत्र सत्यपना कहते हैं। यह उग्रो द्रव्य एक समय में उपजे हैं, और बिस हैं, और स्थिर रहता है, सो इसका विस्तार दिग्गते हैं कि जैसे धर्मास्तिकाय में अगुरु लघु पर्यायका अमरुयाते प्रदेशों में घटता है दूसरेमें बढ़ता है इसी रीतिसे घटता बढ़ता रहता है क्यों कि अगुरु लघु पर्याय चपल हैं। और जिम प्रदेश में अनन्ता है उस प्रदेश में असर्याता इसी रीतिसे लोक प्रमाण असख्यात प्रदेश में सरीगा समकाल अगुरु लघु पर्याय फिर रहा है क्यों कि देखो जिम प्रदेश में अमरुगता था सो तो व्यय अर्थात् विनाश हुआ। और अनन्ता उत्पाद अर्थात् उत्पन्न हुआ इसी रीतिसे जिस प्रदेश में अनन्ता उमका तो व्यय अर्थात् विनाश हुआ और उस के ठिकाने अमरुयातका उत्पाद अर्थात् उत्पन्न हुआ। और बाकी गुग ध्रुव हैं। इस रीतिसे एक उपजना और विनाश अथवा ध्रुव रहना येही सत्यपना है। जैसे धर्मास्तिकाय में उम-जना बिनसना और ध्रुव रहना है तैसे ही अवर्मास्तिकाय लोक प्रमाण असर्यात प्रदेश में हो रहा है। ऐसेही आकाश लोक अनोफ अनन्ता प्रदेश में अगुरु लघु अर्थात् उत्पाद वय ध्रुव होरहा है ऐसेही एक जीवका असर्यात प्रदेश है उसमें भी अगुरु लघु अर्थात् उत्पादवय ध्रुव सदाकाल होरहा है। तैसेही कालमें होरहा है इस रीति में सर्व द्रव्यमें सत्यपना है सो अगुरु लघुका है जो अगुरु लघु न होता तो प्रदेशों में भेदकहनाभी न बनता इस-लिये अगुरु लघुका भेदहै सोही सत्यपना है। जिसका सत्यपना अर्थात् अगुरु लघु एक है वो द्रव्यभी एक है। और जिसका अगुरु

लघु अध्यान् सत्य पना जुदा है वो द्रव्य भा जुदा है इस रीतिसे सत्य पना कहा । अब अगुरु लघुपना कहते हैं कि । जो द्रव्यका अगुरु लघु पर्याय है उस पर्यायका हानि वृद्धि हाती है सो वृद्धिभी छ प्रकारकी है । और हानिभी छ प्रकारकी है । सा उन उओं प्रकारोंका नाम लिखत हैं ॥ १ अनन्त भाग वृद्धि । २ असरयातभागवृद्धि । ३ सरयातभागवृद्धि । ४ सरयातगुण वृद्धि । ५ असरयातगुणवृद्धि । ६ अनन्तगुणवृद्धि । यह छ प्रकार की वृद्धि कहा ॥ अब हानि कहते हैं ॥ १ अनन्त भागहानि । २ असरयातभागहानि । ३ सरयातभागहानि । ४ सरयातगुणहानि । ५ असरयातगुण हानि । ६ अनन्तगुणहानि । यह छ प्रकार हानि कहा ॥ यह वृद्धि और हानि सर्व द्रव्योंमें समय समयमें हो रही है ॥ वृद्धि कहता उपजना हानि कहता नाश होना ॥ इस रीतिसे छ सामान्य स्वभाव कह ॥ अब गुणका भावना अर्थात् विशेष बात कहत है । जो सर्व द्रव्यमें सरीखा गुण है उसको तो सामान्य गुण कहत हैं । और जो एक द्रव्यमें गुण है वो दूसरे द्रव्यमें नहीं है वो द्रव्यमें विशेष गुण कहा जाता है । और जो गुण किसी में है और किसीमें नहीं है उसको साधारण असाधारण भा कहते हैं । इसरीतिसे इन उओं द्रव्योंमें गुण अनन्त पर्याय अनन्त स्वभाव सदा साश्वता है सा श्री केवली भगवन्त ने देखा और उसका उपदेश दिया सा वो उपदेश सत्य है उस में कोई तरह का सन्देह नहीं । इस रीति से जिन पुरुषों का निःसन्देह श्रद्धा अर्थात् विश्वास है उन्हीं पुरुषों ने इन पदाथों को यथावत् जाना है उन्हीं पुरुषों का निश्चय ज्ञान माक्ष का कारण है और जो ज्ञान का पाता है वो जीव विरति करता है विरति नाम त्याग का

खोटा अर्थ अर्थात् झूठ उपदेश देनेका त्याग किया उसने निश्चय
 मृषावाद का त्याग किया क्योंकि देगो श्री बांत राग सर्वज्ञ केवने
 शास्त्राम गमा कहा है कि जिस पुरुष ने चौथा वृत्त अर्थात् मंथु
 (स्या मयन) किया उसने तो एक चारित्र भग किया और उस
 चारित्र भग करने की आलोचना अर्थात् फिर करके चारित्र लेन म
 शुद्ध हा जाता है। और जिमने मृषावात् अर्थात् सिद्धान्त का
 बांतराग की आज्ञा से विपरीत उपदेश दिया उसने ज्ञान, दर्शन,
 चारित्र तीनों ही का भग कर दिया और उस मृषावात् अर्थात्
 झूठ उपदेश देने की आलोचना अर्थात् प्रायश्चित् लय तो भी
 शुद्ध न होय क्योंकि जिस झूठ उपदेश में भोले जीव मिव्यात्
 मार्ग अर्थात् जिनाज्ञा म विपरीत प्रवृत्त हागये है उस प्रवृत्त होनेसे
 जो संसारका बहना म नदने का हतु ना मिव्या श्रमण किया जो
 उपदेश वो ममार में भ्रमण करनेवाला ठहरा और उस मिव्या उप-
 देश का करनेवाला अनक जीवा को आप झूठा उपदेश देकर
 मिव्यात्व में करता है इस लिये उस मृषावाद अर्थात् झूठा उप-
 देश दनवाले का आलोचना नहीं होती। क्योंकि उस चौथे
 वृत्त अर्थात् श्री सवन करनेवाले के ता एक चारित्र भग हुआ
 था परन्तु ज्ञान दर्शन भग नहीं हुआ था इस लिये उस चारित्र
 की आलोचना अर्थात् प्रायश्चित् आय गया और शुद्ध होगया।
 और जिमने मृषावात् अर्थात् जिनाज्ञासे विपरीत उपदेश दिया
 तो उस विपरीत उपदेश म ज्ञान दर्शन चारित्र तीनों ही भग हो
 गये उस चारित्र क भग करने स ता कवल भग करनेवाल की
 आत्मा मलीन हाता है। इसलिये उस मलीन आत्मा को शुद्ध
 कर सकता है। परन्तु
 मलीन करता है

स्थूल प्राणातिपात आदि पाच वृत और (७) गुण वृत तथा शिंषा वृतादि यह (१०) वृत श्रावण के हैं सो इस सर्वे वृत और दैव वृत के भेद हैं तिन भेदों को निश्चय और व्यवहार दोनो तरह से दिग्गते हैं। सो प्रथम प्राणातीपात निश्चय और व्यवहार का वर्णन करते हैं। जो जाव पर जीव को अपने सरीरया जान पर सर्वे जीव की रक्षा करे और किसी जीव को न मारे उसका नाम दया अर्थात् अहिंसा है इस दयाका पालने वाला जीव प्राणातीपात अर्थात् जीवों की हिंसा करने से यथा इस को व्यवहार चरित्र कहते हैं। अत्र निश्चय चरित्र का वर्णन करते हैं। जो जीव कर्मों के वश दुःख पाता है उस कर्म रूप दुःख से अपने जीव को बचाना अर्थात् नया कर्म न बधन देना और बड़े हुए कर्म को छुड़ाना उसका नाम निश्चय दया अर्थात् अहिंसा है। क्योंकि जीव कर्मों के वश करके हाससार में जन्म मरण करता है इस लिये उन कर्मों से अपने जाव को बचाना अर्थात् कर्मों में न पडने देना और ज्ञान से कर्मा को छुड़ाय कर अपने जाव को निर्मल करता है वो जाव निश्चय प्राणातीपात का त्याग करता है। इस रीति से निश्चय व्यवहार प्राणातीपात वृत कहा। अत्र मृपावाद का स्वरूप कहते हैं। लौकिक में शूद्रा बचन न बोले उसको व्यवहार मृपावाद का त्याग कहते हैं। यह त्याग व्यवहारक है। निश्चय मृपावाद का त्याग उसको कहते हैं। जा पर वस्तु पुद्गल शरार इन्द्रा आदिक हैं उनको अपना कहना यह निश्चय मृपावाद है। जा इन्द्रा आदि शरीर पुद्गलाक वस्तुओं अपना न रह और इनको अज्ञान शिंषा जान कर छोड़ उसन निश्चय मृपावाद छोड़ा। अथवा सिद्धात का स्रोटा अर्थ कहे सा मा निश्चय में मृपावादी है जिसने सिद्धातरू

मोटा अर्थ अर्थात् झूठ उपदेश देनेका त्याग किया उसने निश्चय
 मृपावाद का त्याग किया क्योंकि देगो श्री घांत राग सर्वैत देवने
 शास्त्रोंमें ऐसा कहा है कि जिम पुष्प ने चौथा वृत् अर्थात् मैथुन
 (स्रा सजन) किया उसने तो एत चारित्र भग किया और उस
 चारित्र भग करने की आलोचना अर्थात् फिर करके चारित्र लेने से
 शुद्ध हो जाता है। और जिमन मृपावाद अर्थात् सिद्धान्त का
 वातराग की आद्या स विपरीत उपदेश दिया उसन ज्ञान, दर्शन,
 चारित्र तीनों ही का भंग कर लिया और उस मृपावाद अर्थात्
 झूठ उपदेश देने की आलोचना अर्थात् प्रायश्चित् लेय तो भी
 शुद्ध न होय क्योंकि जिस झूठ उपदेश से भोले जीव मिथ्यात्व
 मार्ग अर्थात् जिनाज्ञा से विपरीत प्रवृत्त हांगये हैं उम प्रवृत्त होनेस
 जो भमारका घटना उस घटने वा हेतु वा मिथ्या श्रमण किया जो
 उपदेश वा संसार म श्रमण करानेवाला ठहरा और उम मिथ्या उप-
 देश वा करनेवाला जनक जीवों को आप झूठा उपदेश दकर
 मिथ्यात्व में गेरता है इस लिय उम मृपावाद अर्थात् झूठा उप-
 देश देनेवाले का आलोचना नहीं होती। क्योंकि उस चौथे
 वृत् अर्थात् श्री सजन करनेवाले के तो एक चारित्र भग हुआ
 था परन्तु ज्ञान दर्शन भग नहीं हुआ वा इस लिये उस चारित्र
 की आलोचना अर्थात् प्रायश्चित् श्राय गया और शुद्ध होगया।
 और जिसने मृपावाद अर्थात् जिनाज्ञासे विपरीत उपदेश दिया
 तो उस विपरीत उपदेश से ज्ञान दर्शन चारित्र तीनों ही भग हो
 गये उस चारित्र के भग करने स ता केवल भग करनेवाले की
 आत्मा मर्लीन होती है। इसलिये उस मर्लीन आत्माके शुद्ध
 होनेका प्रायश्चित्त हो सकता है। परन्तु ज्ञानदर्शिका भग करने
 वाला है सो अपनी आत्माको मर्लीन करता है और अनेक जीवों

का आत्मा उस मिथ्या उपदेश से मलीन कर देता है। मो
केवल उसका आत्मा मलीन होता तब तो आलोचना लेने से
शुद्ध हो जाती परन्तु उस मिथ्या उपदेश अर्थात् ज्ञान दर्शन भग
करने वाले ने अनेक जीवोंका आत्मा मलीन कर देना इमनिये
उसका आलोचना नहीं। इस कारणसे भव्य प्राणिया इस दुंडा व
सर्पिणी पंचम काल में अनेक पुरुष मायाचारी धूर्ततासे आडम्बर
महित फिरते हैं कि चिन्तान पेशतर मिथ्या उपदेश दे कर
हजारों लोगों मनुष्याको त्रिनाज्ञासे विपरीत मार्ग में प्रवृत्त
कर लिया और अब भी उस तृणा रूपी नदीमें बहते हुए
दुःख गर्भित वैराग्य वाले वृत्तमान काल में अनेक फिरते हैं सो
उसका सग आत्मार्थि भव्य प्राणिया का न करना चादिये
क्योंकि उनका सग करारसे केवल मसारना बढना है न कि
निर्जराता इतु है। इस रीतिसे मशानादका स्वरूप कहा। अब
अदत्ता दानका स्वरूप कहते हैं। जो दूसरेका धन वस्तु डिपाय
अर्थात् चोरी ठगई करके लाना अर्थात् मालिककी वस्तु है उस
वस्तु वाले मालिकके दिय बिना अथवा बिना हुस्म जो वस्तु
लेना उसका नाम चोरा है इन चारी का जो त्याग करने वाला
है उसको व्यवहार अदत्ता अर्थात् चोरीका त्याग है। अब निश्चयसे
अदत्ता दान कहते हैं जा पुरुष पाच इन्द्राका (०३) विषय अथवा
(८) कर्मकी वर्गणा इत्यादि पर वस्तु लेनेकी इच्छा उसको
विषय अदत्तादान कहते हैं। इस जगह कोई ऐसी शका करे कि
इन्द्रिया का विषय वा कर्म लेनेकी इच्छा कौन करता है। उस
को कहते हैं कि हे भोले भाई जिस पुण्यको जिन धम्म धीतराग
के बचनका रहस्य मालूम नहीं ह वो पुण्य शुभ क्रिया करते हैं
अन्तरग रुची नहीं है कदाचित् अन्तरग रुचा भी होगी तो आत्म

स्वरूप नही जाना उस आत्म स्वरूप के जाने बिना शुभ की वाछा वाले चीवाँ का बहुत होती है इसीलिये आत्म स्वरूप जाने बिना शुभ प्रिया में प्रवृत्त जल्दी होते हैं सो उस शुभ से बधा जा पुण्य उस पुण्य के ४० भेद है वे ४० भेद चार कर्मकी शुभ प्रकृता है जिनने व्यवहार अदत्तादान का त्याग किया परन्तु अन्तरग पुण्य आत्कि शुभ कार्य की इच्छा (वाछा) है तो उस पुरुष को निश्चय अदत्तादान लगता है और जिस पुरुष क ऊपर लिखे मुजब त्याग है उसको निश्चय अदत्तादान का त्याग है। इस रीति से अदत्तादान कहा। अत्र मैथुनवृत्तका वर्णन करते हैं। साधु को तो सर्वदा स्त्री त्याग अर्थात् मैथुन आदिन से व बार प्रहस्र के परणी (ब्याही) स्त्रीसे मैथुन आदि करे वाकी अन्य (पराई) स्त्रीका त्याग है ऐसा जो त्याग उस का व्यवहार त्याग कहने है। और निश्चय त्याग उसको कहते हैं कि विषय का जो भोगना उस विषयके समतारूप नृणा का जा त्याग उसका नाम निश्चय मैथुन का त्याग है क्योंकि वाह्य विषय छोड़ना तो सुगम है परन्तु अन्तरग लालचमाही छोड़ना बहुत कठिन है। क्योंकि राह्य विषय को त्याग करने वाले तो दुःख गर्भित मोह गर्भित वैराग्य गते अववा लौकिकम पुजाने वाल आडम्बर दिखाने के दाम्न अनेक तरह क त्याग पश्यान करते है आर अन्तरग मं विषय संतनेकी इच्छा अथवा माया वृत्ति से करते हैं उनको निश्चय मैथुन लगता है। इस रीति से मैथुनवृत्त कहा। अत्र परिग्रह प्रमाण वृत्तका स्वरूप कहते हैं परिग्रहमें वन, गान्य, दास, दामी, चौपद, घर, धरती, बन्ध, आभरण, आदि सर्वदा त्याग ता साधु क है। और प्रहस्रिक व इच्छा प्रमाण अर्थात् जितनी जिसकी इच्छा होय उस मुजिब

रक्खे बाकीका त्याग करे इस रीतिना जो त्याग सो व्यवहार परिग्रह का त्याग है। और निश्चय परिग्रहका त्याग तो उसको है कि जिसने भाव कर्म राग द्वेष अज्ञान और द्रव्य कर्म हाना-वर्ण प्रमुख आठोंका अथवा शरार इन्द्रो आत्मिक का परिहार अर्थात् छोड़ना उसी का नाम निश्चय परिग्रह का त्याग है। इस रीति से पाचों वृत्तका स्वरूप निश्चय व्यवहार करके कहा। सो यह पाचों वृत्तों का साधु के तो सर्वथा त्याग होय तब पंच महावृत्तधारी वाजे। और ग्रहस्थ के अनुमूलता स्थूल अर्थात् इच्छा मुजिन रख कर बाकी त्याग कर उस स्थूल वृत्त को ही करने वाला देशवृत्ता श्रावक वाजता है। अब देशवृत्ता के हा (७) गुणवृत्त और शिक्षावृत्त हैं उनका स्वरूप भी निश्चय व्यवहार से दिखते हैं। छठा दिशा परिमाण वृत्त कहते हैं। चार दिशा अर्थात् पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, पाचवा ऊची, छठी नीची, इन छठा दिशा का जा प्रमाण करना कि ऊँचा दिशा में इतनी इतना दूर तक जाना उसके उपरान्त नहीं जाना ऐसा जो त्याग करना उसका नाम दिशाप्रमाणवृत्त है। परन्तु निश्चयमें तो उसीका नाम दिशाप्रमाण है कि चारगती अधान् नर्क, त्रियंश्व मनुष्य, और देवता, आदि चार गतियोंसे उदासान परिणाम हो कर उन गतियोंका कर्मन बन्वने दना केवल सिद्धावस्था को अगी-कार करके रह उसी का नाम निश्चय दिशिप्रमाणवृत्त है। अब भोगानुभोग सातवावृत्त कहते हैं। भोगना तो उसका है जो एक दफे भोगनेमें आवे जैसे रोटी आदिक एक दफेही खाई जाती है उसको तो भोग कहते हैं। और उपभोग उसको कहते हैं कि जो बारम्बार भोगनेमें आवे जैसे कि आभरण स्त्री आदि बार २ याक बोई भोगन में आत है इसलिये उनको उपभोग

उसको कहते हैं कि जो जीव अज्ञान से शुभ अशुभ कर्मोंका बन्ध करता है उस कर्म से अपना जाव अतक जन्म मरण रूपि दुःख पाता है उस दुःखका हेतु मिथ्यात्व, अवृत्त, कर्माय, योग, आदि हैं उनसे अपने जावका घचाना और अपने जाव कान दंडने दना उसीका नाम निश्चय अनर्थक अटवृत्त है। अब तन्मासामायिक वृत्त कहते हैं। जो मन वचनकाय से आरभ अर्थात् संसारी मृत्युकी छाड कर अज्ञान में नियम अनुसार घंठना अपना पुस्तक पत्राका वाचना या भाग आदि का करना उसका नाम व्यवहार सामायिक वृत्त है और निश्चय सामायिक उसको कहते हैं कि जो जीव अपना ज्ञान दान चारत्र गुणका विचारे और सर्व जीवकी सत्तागुण एक समान जाने और सर्व जीवसे समता परणाम रखे और अपने समान समझ उसका नाम निश्चय सामायिक वृत्त है। अब (१०) साक्षात्गामी वृत्त कहते हैं। जो मन वचन कायका चपलता दूर कर और एक ठिकाने अर्थात् एक ममान में बन्द कर वम ध्यानका करना मो व्यवहार से देशात्गामी वृत्त है। और निश्चय सेना देशात्गामी उसको कहते हैं कि श्रुत ज्ञान के जोरमें उ द्रव्याको जाने जिसमें से पंच का त्याग करे और सब ज्ञानवान जीव कोक्षा ध्यावे अर्थात् प्रज्ञा कर उसका नाम निश्चय देशात्गामी वृत्त है। अब पोषध वृत्त कहते हैं। जो चार प्रहर दिनमें अर्थात् चार घण्टा रागता परिणाम से निरारभ अर्थात् ससारा कर वचन सिंभाय यान में प्रवृत्त है। उमका नाम पोषध वृत्त है। निश्चय में पाप

अपना आत्माका ज्ञान

— ११ — आपिमान तर्क

होय जत्र अज्ञान दूर होगा तत्र आत्माकी अत्रश्यमेवपुष्टा होगी
इम रीति से जा आत्मा को पुष्ट करे उसका नाम निश्चय पोषध
वृत्त है । अत्र (१२) वा अतिथिसभिभाग वृत्त कहते हैं । जो
पोषध के पातने अथवा सप्त सर्व काल में साधु के वास्ते अथवा
जिन धर्मी श्रावक का अपनी शक्ति से अनुमार दान का देना
उसका नाम व्यवहार से अतिथिसभिभाग है और निश्चय से
अतिथिसभिभाग उसको कहते हैं । शिष्यादिक अथवा अन्य साधु
को अथवा गृहस्थ आदिक को ज्ञान का पढाना और उसका
आत्म स्वरूप का बताना जिससे उसका जन्म मरण भिटे और
मोक्ष की प्राप्ति होय । इस हेतु से ज्ञान का जा दान देना उसीका
नाम निश्चय अतिथिसभिभाग वृत्त है । इम रीतिसे निश्चय न्यव-
हार से श्रावक के (१०) वृत्तों का वर्णन किया सी इस निश्चय
व्यवहार सहित (१२) वृत्त धारे उस जीवको पाच वे गुण ठाने
देश वृत्ति श्रावक कहता उस श्रावक के देश कहता थोड़ीसीही वृत्ति
जिससे उमका नाम श्रावक है और सब वृत्ति अर्थात् सर्वथा जो
त्याग उस त्याग के करने वाला यती (मुनि) (साधु) होता
है । सो उस साधु के पंचमहा वृत्त कहे जात हैं । सो उन पंचमहा
वृत्त में सर्व वृत्त आजाते हैं । ऐसा जो निश्चय व्यवहार त्याग
रूपका करना और ज्ञान ध्यान सम्बर निर्भरा में स्थिरता रूप
परिणाम का रखाना उमका नाम निश्चय चारित्र है । उस चारित्र
के दो मार्ग अर्थात् दो भेद हैं । १ उत्सर्ग मार्ग २ अपवादमार्ग
उत्सर्ग मार्ग अर्थात् उत्कृष्ट तीक्ष्णधारा रूप परिणाम का रहना ।
और अपवाद उसकी कहते हैं कि तीक्ष्ण परिणाम को जिस रीति
से दृढ (मजबूत) रखते और उस मजबूत रखन के वास्ते कुछ
श्रीकार कर के सेने जत्र परिणाम तीक्ष्ण वृत्ति में मजबूत है

जाय तो फिर उसको छोड़ देय उसका नाम अपवाद है । उत्तम । सघरणमि असुद्ध दुःखवि गिन्हत देत याणहिय आउरदिठ तेण तेचेवहिय असघरणे । अत्र इस जगह ध्यानका स्वरूप कहते हैं सो उस ध्यान के चार भेद हैं । १ आर्त ध्यान । २ रौद्रध्यान । ३ धर्म ध्यान । ४ शुभल ध्यान । प्रथम आर्त ध्यान का वर्णन करते हैं कि आर्त कहता चिन्ता (सोच) फिर् एकाग्र होकर मनसे जो विचारना उसका नाम आर्त ध्यान है । उस आर्तध्यान के चार पाये हैं । १ इष्ट वियोग । २ अनिष्ट सयोग । ३ रोगका चिंतवन । ४ अप्रसोच । प्रथम इष्ट वियोग का स्वरूप कहते हैं कि इष्ट कहता वल्लभ (प्यारी) वस्तुका वियोग होना जैसे कि माता पिता भाई भगिनी स्त्री (भार्या) पुत्र आदिक का वियोग अर्थात् दूर होना उस दूर होने से जो चिन्ता शोक पश्चात्ताप आदि अनक तरह से व्याकुल रहना उसका नाम इष्ट वियोग आर्त ध्यान है । अब दूसरा अनिष्ट सयोग पाया कहते हैं कि अनिष्ट कहता खोटा दुःख के देने वाला सग होना उसका नाम अनिष्ट सयोग है । जैसे कि कलहकारी स्त्री खोटा पुत्र दुश्मन आदिका जो सयोग कहता मिलना अर्थात् एक जगह का रहना और उनका अलग न होना और उन क सयोग से दुःखका उपजना उस दुःख से जो चिन्ता शोक आदि एकाग्र मन से करना उसका नाम अनिष्ट सयोग आर्त ध्यान है । उन तीसरा रोग आर्तध्यान कहते हैं कि शरीर में रोगादि उत्पन्न होय उस रोग के उत्पन्न होने से नाना प्रकार के शरार में क्लेश होते हैं । उस क्लेश के मिटाने की चिन्ता शोक आदि एकाग्र मन से विचारना उसका नाम रोग आर्तध्यान है । अत्र चौथा अप्रसोच आर्तध्यान कहते हैं कि जा आग के कालका सोच सा अप्रसोच है साही

दिगते हैं कि भविष्यत् सम्बन्ध के वास्ते ऐसा प्रिचार है कि
 पिछले सम्बन्ध में मैंने ऐसा काम किया आगे के सम्बन्ध में
 अधिक काम करना अवश्य (जरूर) है। अथवा दान ज्ञान
 सपरया आदिक जो शुभकरणी करता है उस शुभकरणी के फलका
 चिन्तन करे कि मैं दान देता ह। इससे मेरेको पुण्य फल होगा
 और उस पुण्य फल से मेरेको देवलोक मिलेगा अथवा राजादिक
 पदवी मिले वा सेठ साहूकार होऊगा ऐसा जो एकाम मन कर क
 प्रिचारना सो अप्रसोच आर्तध्यान है। इस रीति से इस आर्त
 ध्यान के चार पाये बहे सो आर्तध्यान तिर्यश्च गतीका लजाने
 वाला जगुभ ध्यान है और यह ध्यान पाच व गुणठान अर्थात्
 शेष विरति श्रानक और छठे गुण ठानेतक आर्तध्या
 यन (उपज) होता है। इस लिये हे भय प्राणियों उम आर्तध्यान
 छाडने का यत्र (उपाय) करो। अत्र रौद्रध्यान का स्वरूप
 कहते हैं कि रौद्र रहता महा फटोर भयकर जा परिणाम से
 एकाम चिन्तन करना उमना नाम रौद्र ध्यान है। सा इस रौद्र
 ध्यानके भी चार पाये हैं। १ हिंसानुबन्धि अर्थात् जीवोंकी
 हिंसा बहुत करे। २ मृपानु बन्धि अर्थात् भूठ बहुत जोत। ३
 चौरान बन्धि अर्थात् चारी बहुत करे। ४ परिग्रह रभान बन्धि
 अर्थात् परिग्रहको बहुत इकट्ठा करना। अब इन चार पायान्
 विस्तारसे वर्णन करते हैं। पहला जो हिंसानु बन्धि रौद्र ध्यान
 का करनेवाला जीव अनेक जीवोंको मारकर अपने चित्त (मन)
 (दिल) में बडा खुशी होता है और जीव मारनेके वास्त निकार
 आदि खेलनेके वास्ते वन (जगल) में जाय कर एकाम चित्त
 होकर जीवोंको मारता है और जुगी हाता है और कहता है
 कि देखो मैंने कैसा निशान मारा सत्र देखतेही रहगये क्योंकि

दूसरेको मारना बड़ा पराक्रम (धहादुरा) का काम है । इस रीतिसे जीनाको मारकर सुशी होना अथवा दूसरा कोई जीवाको मार रहा है उसका देवपुत्र सुशी होना अथवा सग्राम (युद्ध) का दात कर और उसको बहुत अच्छा कहे इत्यादि अनेक तरहसे हिंसा अर्थात् जावोंका मारे अथवा मारतेको देवपुत्र सुशी होय उसका नाम हिंसा रूद्र ध्यान है । अब दूसरा पाया कहत हैं । जो पुरुष झूठ बाल कर मनम सुशी हाय कि मैं कसा झूठ बोलता हूँ और मेरे भूठको कोई नहीं पकड़ सकता है । इस रीतिस मैं घाना करता हूँ कि कसाहा बुद्धिमान पुरुष होय परन्तु मेरे भूठको न र मभसक । ऐसा जिस पुरुषके मनम भूठ बालनेका परिणाम है उसका नाम मृपानुबन्धि रूद्र ध्यान है । अब तीसरा चोरी रूद्र ध्यान पाया कहत हैं । जो पुरुष चोरी करे अथवा ठगाई करे और मनमें खुशाहाय और कह कि देखो मेरी घरावर जोरावर कौन है कि मैं दूसरोंका मान खाता हूँ और मेरा कोई झूठ नहीं कर सकता पराया मान लाना हा मदीना काम है । इस रीति का परिणाम है जिसका उसका चौरानुबन्धि रूद्रध्यान कहते हैं । अब चौथा पारग्रह रक्षण रूद्रध्यान कहते हैं । जो पुरुष पारग्रह अर्थात् धन धान्य आदि बहुत इकट्ठा कर और इस इकट्ठे करने ही क लालच अथान् तृष्णाम बना रहे । और उस पारग्रह इकट्ठे करनेके वास्त अनेक तरहसे झूठरूपट करे और मनम अहकार धरे कि मेरी घरावर कौन है कि जो मेरा सी वस्तु इकट्ठा करके सचय करे और मैं जितना अधिक पारग्रह इकट्ठा करूंगा उतना हा मेर बेटा पोता आदिक क नाम आनगा आर वे लोग मरको अच्छा कहगे कि हमारे बाप दाद ऐम होगय थे । इस वास्ते रूद्र धन आदिकको इकट्ठा तो करे और धर्मक कामम एक पैसा भी न लगावे आप

भाव न दूसरेको खिलापि लोगोम बैठकर बड़ी २ बात बनावे
 बना है कृपण और धनवाला कहावे मरेगा जब पल्ले कछु नहीं
 गाव इसी जगह सब ठाठ पडा रह जावे । इस रीति से जो परि-
 ग्रहका रना करने म परिणाम है जिसका उसका नाम परिग्रह
 रशानुमन्वि रौद्रध्यान है । इस रीति से इस रौद्रध्यान के चार
 पाय कह । मा यह रौद्रध्यान महासोटा नर्क गवाको ले जाने वाला
 है और यह रौद्रध्यान पाच वे गुण ठाने अर्थात् देश पिरति
 श्रावक के चारा पाये रौद्रध्यान है । और छठे गुण ठाने वाले
 के एक हिंसा रौद्रध्यान प्रथम पाया किमी जीवमे होता है और
 सर्व मे नही । इसलिये यह रौद्रध्यान अशुभ कर्म अर्थात् पाप
 का हेतु है इसलिये हे भय प्राणियो ! इस रौद्रध्यान का छोडो ।
 इस रीति से यह २ अशुभ ध्यान मे सो कह । अत्र आगे + दो
 शुभ ध्यान है उनका भा वर्णन करने हैं । प्रथम धर्म ध्यान कहते
 है जो व्यवहार त्रिया रूप कारण सो धर्म अर्था श्रुत ज्ञान और
 चारित्र उपादान रूप सावन धर्म अथवा रत्न त्रयी अर्थात् ज्ञान
 ज्ञान चारित्र भेद रूप से उपादान शुद्ध व्यवहार उत्सर्ग अनुयायी
 सो अपवाद धर्म ध्यान जानना सो इस धर्म ध्यानके भी चार
 पाये होते हैं । १ आज्ञा विचय अर्थात् वीतरागका आज्ञा माने । २
 अपायविचय । ३ विषाद विचय । ४ सत्यान विचय । प्रथम
 आज्ञा विचय धर्म ध्यान कहते हैं । जो वातगाग देवकी आज्ञा है
 कि नित्य, अनित्य, गन्, अनेक, मत्य, जमत्य, आदि स्याद्वाद्
 गतिसे निश्चय, व्यवहार, उत्सर्ग, अपवाद, कारण, कार्य, जिस
 रीतिसे श्रीअर्हन्त वीतरागदेवने कहा है उसी रीतिसे कहना मुना
 मानना और अपने अन्तरगमे उस आज्ञाकीरुची सहित विचार
 करना कि परमेश्वर को इस आज्ञासे विपरीत चलनमे मेरा

ससार होगा ऐसा है । भय जिसके चित्तमें और केवल श्रात्रीतराग की आज्ञाहाका प्रधान गिने और उस आज्ञाहीको विचार करे उसका नाम आज्ञा विचार धर्म ध्यान है । अत्र दूमेरा अपाय विचय धर्म ध्यान कहत हैं । जो जीवम अशुद्धतासे कर्म सयोग ससार अवस्थामें अनेक तरहका अपाय कहता आपदा अर्थात् दु ख आर दु ख का कारण अज्ञान राग द्वेष कषाय आश्रय पाप पुण्य आदि यह मेरा नहीं और मैं इनसे न्यारा ह मेरेम ता अनन्त ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य है । और मैं शुद्ध बुद्ध अजर अमर अविनाशा ह और मैं आदि अनन्त करके रहित अक्षय अनश्वर अचल अकल अमल अरुन अगम आनामा अरूपा अकामा अनन्धन अनुदय अनुदारक असत्त कहता कर्माका सत्ता करके रहित अयोगी अभोगी अरोगा अवेदी अच्छेदी अभेदी अरुणा अकषाद् अशरीरा अलस निरजन अभार्या अनाहारा अव्यायाध अनभवगाहा अगुरु लघु अपरणामी अतीन्द्री अप्राणी अव्यापा सर्वव्यापा अकम्प अपर अविबुद्ध अनाश्रव अवाल अतरुण अवृद्ध अपरम्पार अपापा अपुण्या अत्रार्थी अमाना अमाया अतोभा लाकालाक ज्ञायक शुद्ध सचिदानन्द मरा जाव है । इस राति से जो एकाग्र ध्यान उसका नाम अपाय विचय कहता ऊपर लिखे हुए राग द्वेष आदि आपदा को छाड कर एकाग्र चित्तसे नीच लिख हुए अपने स्वरूप को विचारना उमका नाम अपाय विचय धर्म ध्यान है । अत्र विपाक विचय धर्म ध्यान कहत हैं । विपाक कहता कर्मोका जीव से अलग करके विचारना उसका नाम विपाक विचय है मोहा दिग्मात ह कि जो ऐसा विचार कर कि मेरा जीव अनन्त ज्ञान दर्शन चारित्रमयी है परन्तु कर्मों के वश स दु ख पाता हू

क्योंकि मेरा ज्ञानात् गुण को तो ज्ञानावर्णीय कर्म ने दबाय
 रक्खा है और दर्शनापरणीय कर्मने वर्णन गुणको दबाय रक्खा है।
 इस रीति से आठ कर्मोंने आठ गुणको दबाय रखा है। इसलिये
 जो दुःख सुख हैं सो कर्मों का भोग है इस वाम्ने दुःख उत्पन्न
 होय तो लिखीर अर्थात् मोक्ष नहीं करना क्योंकि कर्मोंका भोग
 है। सो कर्म भोग ही छुटेगा इसलिये रोद नहीं करना। और
 सुख उत्पन्न होय तो हर्ष अर्थात् सुखी नहीं करना। क्योंकि यह
 सुख भी कर्मों का भोग है इसलिये मेरेको हर्ष करना भी ठीक नहीं
 क्योंकि यह दुःख दोनोंही मेरे आत्मगुणको दबाने वाले हैं। ऐसा
 विचार उसका नाम विपाक विचय धर्म ध्यान है। अब चौथा स-
 स्थान विचय धर्म ध्यान कहते हैं। सस्थान कहता (१४) राजप्रमाण
 लोक है (नोट) इस चौथे राज कोही वैष्णव में मत (१५)
 भवन कहते हैं और सुमलमान लोक (१४) तत्र कहते हैं
 इस लोकका जो स्वरूप उसका विचार करे कि तिस १४ राज में
 (७) राज अधो अर्थात् नीचा लोक है। सो उस नीचे लोकमें ही
 नर्क आत्कि है। और (१८) हजार योजन मनुष्य लोक तिठी है
 तिस के ऊपर कुठ न्यून (७) राज ऊर्ध्व लोक अर्थात् ऊचा है
 उस ऊच लोक में सूर्य चन्द्रमा ज्योतिषी और विमानिक देवता
 बसते हैं उन वैमानिक देवता के ऊपर सिद्ध क्षेत्र है उस सिद्ध
 क्षेत्र के बिना इस १५ राजलोक में भ्रमण करने में मेरे को अनन्ता
 काल बीता और मर्त्य लोक में मैंने जन्म मरण करके स्पर्श किया
 है सा इस भ्रमण को छोड़ कर सिद्ध क्षेत्र में बसना अपने को
 ठीक है। इस रीति का जो विचार सो सस्थान विचय धर्म ध्यान
 है। इस रीति से धर्म ध्यान के चार पाये कहे। यह धर्म ध्यान
 चौथे गुण ठाने से गुणठाने पर्यन्त है। अब शुक्ल

ध्यान का स्वरूप कहते हैं । शुक्ल कहता निर्मल शुद्ध दूसरे के अवलम्बन बिना जो ध्यान करना उसका नाम शुक्ल ध्यान के भाचार पाये हैं । १ प्रथमत्व वितर्कसप्र विचार । २ एकत्व वितर्कसप्र विचार । ३ सूक्ष्म अप्रतिपत्ती । ४ उच्छन्न त्रियानिवृता । यह चार भेद के नाम कह । अत्र पहला भेद कहते हैं कि प्रथमत्व कहना जुदा २ वितर्क कहता तर्क सहित सपर विचार कहता अपन आत्म गुणकाही है विचार जिसमें उसका नाम प्रथमत्व वितर्क सपर विचार है सो हा दिखता है कि जीवसे अजीवको जुदा करना अथवा विभावसे स्वभाव जुदा करना अर्थात् प्रथमरूपन अपने स्वरूप के विषय रमण अथान् आत्म द्रव्य के गुण तथा पर्याय अथवा द्रव्य वा पर्याय को जुदा २ वितर्क कहता तर्क सहित विकल्प पने में विचार अर्थात् द्रव्य गुण पर्याय को आपस में सक्रमण अर्थात् एक का एक में मिलावे इस राति से स्वधर्म के विषय धर्मान्तर का भेद करे सो प्रथमत्व कहिये उस प्रथमत्व में जो वितर्क कहता श्रुति ज्ञान आधीन उपयोग सपर विचार कहता विकल्प उपयोग एकत्व अर्थात् एक आत्म गुणको विचारे जिसके बाद दूसरे आत्म गुण का विचार इस राति स जो एकप्र चित्तका हाना और उस आत्म धर्म म हा निर्मल विकल्प अर्थात् आत्म गुण का ही है विचार जिस म ऐसा जा स्थिरता रूप आत्म रमण एकप्रता का हाना उसका नाम प्रथमत्व वितर्क सप्र विचार शुक्ल ध्यान प्रथम पाय में अपना सत्ताको ध्यावे उसको प्रथम पाया शुक्ल ध्यान का होय यह पाया (८) वें गुण ठाने से लेकर (११) व गुण ठान तर है । अब दूसरा पाया शुक्ल ध्यान का कहते हैं कि जो जाव अपने गुण पर्याय की एकता करके ध्यावे कि मेरा गुण पर्याय जाव से जुदा नहीं

और गुण पर्याय से जीव जुदा नहीं यह सब एक है क्योंकि मेरे
 नाव सिद्धस्वरूप एक है मेरे से जुटा कोई नहीं ऐसा जो एक
 त्व पने स्वयंस्वरूप तन्मय एकत्व पने ध्याव वितर्क कहता श्रुत ज्ञान
 कोई अवलम्बन (सहारा) पने अपारि विचार कहता विकल्प कर
 रहित दर्शन ज्ञान चारित्र्य कारण विना रत्न श्रय की एकता प
 समय में कारण कार्य पने का जो ध्यान और धीर्य उपयोग प
 एकता में ही एकामता का होना उसका नाम एकत्व वितर्क अ
 विचार नाम शुक्ल ध्यान का दूसरा पाया (१२) वे गुण ठ
 में होता है और इस पाये में श्रुत ज्ञान अवलम्बी पना है ध्या
 अवधीया मन पर्यन्त ज्ञान के उपयोग वाला जीव इस शुक्ल
 ध्यानके दूजे पायेको नहीं कर सकता है क्योंकि अधिज्ञान और म
 पर्यन्त ज्ञान अफलम्बन विना है और शुक्ल ध्यानका दूसरा पाया
 अनुयायी अर्थात् श्रुत ज्ञानका अवलम्बन है । इसलिये इस शुक्ल
 ध्यानको दूसरे पायेमें जाय घनघाती कर्मकी क्षय करके अध
 दूर करके पीठे (१३) गुणठाने ध्यान अन्तरीरूपने धर्म है ध
 (१३) व के अन्त और चवदवे गुणठानेमें दो पाये शुक्ल ध
 के होते हैं सोही दिग्गते हैं । जिस वक्तमें तीसरा पाया म
 त्रिया अप्रतिपाती शुक्ल ध्यानको जीव करता है उस वक्तमें स
 मन वचन काययोग कौरुध अर्थात् रोके और सैलसी करण व
 अयोगी होय और अप्रतिपाती कहता निर्मल धीय अचलना
 पारणामका होना उसका नाम सूक्ष्म अक्रिया अप्रतिपाती
 ध्यानका तीसरा पाया कहते हैं (नाट) सैलसी नाम पर्वत
 जैसे पर्वत अचल होता है उसी रीतिमें होय । इस शुक्ल ध
 तीसर पायेके ध्यान करनेवाल जीवके सत्तामें जो (८५) स
 रही थी उसमेंस (७२) प्रकृतीका क्षय करे अर्थात् दूर

इसके तिस तीसरा पाया कहा । अब उच्छिन्न क्रिया निवृत्ति चौथा पाया कहने हैं । जिस जानन याग निरोध क्रिया उम याग निराधके धा (१३) प्रकृता दूरकर और सर्व क्रियास रहित होकर अक्रिय होता है उसका नाम उच्छिन्न क्रिया निवृत्ति चौथा पाया है । और इस चौथे पायना ध्यान धरनेवाला जीव अत्रगाहना अर्थात् शरीर मानमें से तीसरा भाग घटाव अर्थात् दूर करके यहास (७) राज ऊपर अर्थात् ऊंचा लाकर अन्त सिद्ध क्षेत्र में सिद्ध हाता है अब इस जगह ऐसा शका होती है कि चबद्ध वे गुण ठाग में उच्छिन्न क्रिया कहता अक्रिय है ता ७ राज ऊंचा अर्थात् सिद्ध क्षेत्र में जाने की क्रिया क्यों करता है । इस शका का समाधान ऐसा है कि सिद्ध तो अक्रिय है परन्तु पूर्व प्रेरणा के याग से अथवा जन तुम्हिका न्याय से जीव में ऊपर जाने का गुण है और धर्मास्तिकाय में प्रेरणा गुण है इस निय कर्म रहित जीव मोक्ष में जाय कर स्थिर रहे । फिर भी कोई ऐसा शका करे कि भाग ऊंचा अलोक में क्यों नहीं जाय । तिस शका का ऐसा समाधान है कि अलोक में धर्मास्तिकाय नहीं जाता । फिर कोई शका कर कि भला ऊंचा नहीं जाय तो नीचा क्या नहीं आता । इस तरे का समाधान ऐसा है कि जाव कम करके रहित है इस लिये हलका होन से जीव नीचा नहीं आता । फिर भी कोई शका कर कि जावना अथवा बाया क्या नहीं जाता । इस शका का ऐसा समाधान है कि उस जीव की कोई प्रेरणा करनेवाला नहीं और सिद्ध जीव अकम्प अक्रिय है । फिर भी कोई पूछे कि सिद्ध का कर्म क्यों नहीं लगता है । उस पूछनेवाला का रहना चाहिये कि ह भाले भाई कर्म तो अज्ञान से लगता है और उस जीवने अज्ञान को दूर करके आत्म ज्ञान को प्रगट कर लिया है इस लिये कर्म नहीं लगता है । इस

राति से शुक्ल ध्यान के चारों पायों का वर्णन किया । अथ
दूमरा राति के चार ध्यान आत्मार्थी का और भी दिग्गते
हैं सो पेशतर उनके नाम लिखाते हैं । १ पदस्थ । २
पिण्डस्थ । ३ रूपस्थ । ४ रूपातीत । इन चारों ध्या-
नों के कोई पाये नहीं हैं । सो इन ध्यानों के पदों का अर्थ सहित
वर्णन करते हैं । प्रथम पदस्थ कहता । अर्हन्त, मिद्ध, आचार्य,
उपाध्याय, साधु, इन पाचों पदोंको पच परमेष्ठी कहते हैं । इस
पच परमेष्ठी गुणों का जो विचार सो पदस्थ ध्यान है । अथ
दूमरा पिण्डस्थ ध्यान कहते हैं । पिण्ड कहता शरीर में अर्हन्त
आदि पच परमेष्ठी को अपनी आत्मा में घटाये कि यह अर्हन्त
मिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु के गुण मेरी आत्मा में हैं ऐसा
विचारे अथवा पिण्ड कहता अपन शरीर में चवदे राजका भाग
विचारे अथवा कर्म आदिकका विचार करे कि इन कर्मों से मेरा यह
शरीर बना है । अथवा इस पिण्डस्थ ध्यान में प्राणायाम आदि
भी विचार है सो इस पिण्डस्थ ध्यान का विशेष वर्णन हमारा
किया हुआ (द्रव्य अनुभव रत्नाकर) में देखा इस जगह तो इस
आगममार ग्रन्थ के अनुसार प्रक्रिया दिखाई है । अथ तीसरा
रूपस्थ ध्यान कहते हैं कि जो रूप में यह मेरा जीव अरूपी
अनन्त गुणी है । ऐसा जो ध्यान वह रूपस्थ ध्यान है इन तीनों
ध्यानों को तो धर्म ध्यान में गिनते हैं । अथ चौथा रूपातीत ध्यान
कहते हैं । जो जीव एकाम चित्त वृत्ती होकर ऐसा विचारे कि मैं
निरंजन निर्मल सकल्प विकल्परहित अभेदी एक शुद्ध सत्चित्त
आनन्द अर्थात् सच्चिदानन्द रूपसिद्ध अविनाशी अचल हूँ । ऐसा
जो ध्यान इसका नाम रूपातीत ध्यान है । इस ध्यान में
गुण ठाना, मार्गगा, नय, निश्रेया, प्रमाणः

नहीं है और मैं भी किसी का नहीं हूँ। यह माता पिता पुत्र
 कलत्र आदि सर्व कमा के संयोग से इकट्ठे हो जाते हैं परन्तु मेरा
 कोई नहीं है और मैं भी इनका नहीं हूँ। ऐसा जो विचार उसका
 नाम अन्यत्य भावना है। अब छठी अंगुची भावना कहते हैं।
 यह शरीर अंगुची है क्योंकि इस शरीर में हाड़ मांस मल
 मूत्र क सिवाय और कुछ नहीं है। दूसरे नाग प्रकार क रागादिक
 भी उत्पन्न होते हैं इमलिय रे जाय। तू इस अत्यन्त अंगुची रूप
 शरीर से न्यारा है। सा तू अपने स्वरूपको विचार और इस
 अंगुचा शरीरको छोड़ ऐसा शरीरक ऊपर अंगुची का है
 विचार अर्थात् चिन्तन जिसका उसका नाम अंगुचा भावना
 है। अब सातवीं आश्रव भावना कहते हैं आश्रव नाम आनेवा
 सो उस आश्रव के कारणभूत फल है कि अज्ञान राग द्वेष प्रमुख
 सर्व आश्रव रूप है सा यह दुख देने वाला है ऐसा है विचार
 जिसका उसका नाम आश्रव भावना है। आठवीं सम्बर भावना
 कहते हैं सम्बर नाम दूमेरे को न आने देय अर्थात् जिस वक्त
 जीव ज्ञान ध्यान प्रवृत्त है उस वक्तमें जीव नया धर्म नहीं बाधे
 तब सम्बर भावना होती है। अब निजरा भावना कहते हैं। ज्ञान
 सहित जा त्रिया है सो निजराका कारण है ऐसा विचार है जिसका
 नाम निजरा भावना है। दशमी लोभ भावना कहते हैं। लोक
 कहता (१४) राजका जो स्वरूप विचारे उसका नाम लोक
 भावना है। इग्यारहवीं बोधि दुर्लभ भावना कहते हैं। बोधि कहता
 बुद्धि अर्थात् समकित सहित यथावत् ज्ञानका प्राप्ति जीवको होनी
 मुश्किल है। क्योंकि इस ससार में जीवको ध्रमण करता अनन्ता
 काल बीत गया। परन्तु समकितको प्राप्ति न हुई ऐसा है विचार
 जिसका उसका नाम बोधि दुर्लभ भावना है। बारहवीं धर्म दुर्लभ-

भावना कहते हैं। धर्मका कहनेवाला गुरु शुद्ध आगम अनुसार
 अष्टांग न्य और यथावत आत्म स्वरूपको दिखायकर सचे धर्मकी
 पहिचान करानेवाले गुरुका सयोग मिलना मुश्किल है ऐसा है
 विचार जिसका उसका नाम धर्म दुर्लभ भावना है। इसरीतिसे
 (१०) भावनाका स्वरूप कहा। इसरीति से चारित्रका सम्पूर्ण
 स्वरूप कहा सो है भव्यप्राणियों ऊपर लिखी रीति अनुसार समकित
 महित ज्ञान चारित्र मोक्षका कारण है। इस लिये विशेष उद्यम
 करना चाहिये। कदाचित् ऊपर लिखे अनुसार ज्ञान चारित्र न पले
 तो भा शक्ति राजाकी तरह सदहणा (श्रद्धा) रखना चाहिये
 क्याकि जो श्रद्धा शुद्ध है तो मोक्ष नजदीक है। श्रद्धा अर्थात्
 समीकृत बिना ज्ञान ध्यान क्रिया वृत्त पंच ग्यान सर्व निष्फल है
 इस लिय शुद्ध श्रद्धा रखना क्यों कि जिनकी श्रद्धा शुद्ध है उनका
 सर्व काम शुद्ध है इस श्रद्धा शुद्ध रखनेके वास्ते श्री आगमोमें कहा
 है सोहा दिखात है। गाथा। जमकेतकिरड अहवान सधे इत ह्य
 महहइ सह इमाणा जीपो पावइ अय राम रगण
 । १। अर्थ। हे जीव तू करसक तो कर कदाचित् तेरे से जो न
 हो सक ता जैसा श्री वातराग सर्वज्ञ बने कहा है तैसी ही
 श्रद्धा रख क्योंकि शुद्ध श्रद्धा रखने से जीवको अजर अमर मोक्ष
 पदकी प्राप्ति हाती है। इस लिय श्री वातराग सर्वज्ञ देवका कहा
 हुआ जो जीव अजीव पुण्य, पाप, आश्रव, सम्वर, निर्जरा,
 बन्ध, मोक्ष, यह नवतत्व हैं। तिन तत्वत्व में एक जीव तत्व
 मोक्ष का कारण है। और सम्वर निर्जरा दो गुण हैं। इस लिये
 जीव सम्वर निर्जरा और मोक्ष यह चार उपाध्य अर्थात् ग्रहण
 करने क योग्य हैं। हमरे अजीव पुण्य पाप आश्रव बन्ध यह
 पाप हेय अर्थात् छोड़ने के योग्य हैं। ऐसा है परिणाम जिसका

उसका सम्यग् ज्ञान कहते हैं । सो समझित और ज्ञान शामिल ही होता है क्योंकि श्री अनुयाग द्वार सूत्र में ऐसा कहा है । गाथा । नायम्मिगिण्टयह्यञ्च अग्निह्यञ्चे अइछ अ-ठं भिनइय मेवइय जो सोउय एसोन ऊताम । अर्थ । ज्ञान स छ द्रव्य जाने और लेने के योग्य होय सा लय और छाड़ा क योग्य सो छाड़ ऐसा जो उपदेश उसका नाम नय उपदेश है । इस रीति से शुद्ध श्रद्धा रखते । अत्र शुद्ध श्रद्धा अर्थात् समझित की (१०) रुचिका वर्धन करते हैं । मा पश्तर इनके नाम कहते हैं । १ निसर्ग रुचि २ उपदेश रुचि । ३ आशा रुचि । ४ मूत्र रुचि । ५ धीज रुचि । ६ अभिगम रुचि । ७ विस्तार रुचि । ८ प्रिया रुचि । ९ सन्नेप रुचि । १० धर्म रुचि । अब इनका विस्तार कहत हैं कि रुचि नाम है चाहना का । निसर्ग रुचि उस को कहते हैं कि निश्चय नय करके तत्र अनाव नत्र तत्व जाने और आश्रय का त्याग करे । मन्त्र का ग्रहण करे । और श्री वीतरागक कहे हुए छ द्रव्यको द्रव्य क्षेत्र काल भाव करके जाने अथवा नामादिचार निश्रेषा नैगमादि सात नयका जान और यथा वत् अपना बुद्धिसे शुद्ध मरदहे वीतरागका कहा हुआ पदार्थ यथा वत् माने और जो वीतरागने कहा है उसका तहत अर्थात् सत्यक हे ऐसी चाहना बिना उपदेशके है निसको उसको निसर्ग रुचि कहते हैं । अत्र उपदेश रुचि कहते हैं । ऊपर लिखे नव तत्व अथवा छ द्रव्य गुरु उपदेशमें जानकर होकर सदैव है अर्थान् माने उसका नाम उपदेश रुचि है तीसरी आशा रुचि कहते हैं । जिस पुष्पका रागद्वय अर्थात् मोह और अज्ञान त्र हुआ है और चार घातीकर्मको त्र करके केवल ज्ञान कवल दर्शन उत्पन्न किया है ऐसा जो अर्हन्त तत्र वीतराग अपत्य पाताको जो आशा है उस

जाका है रचि जिमना उसका नाम आज्ञा रचि है । अत्र चौथी
 रचि कहते हैं । जिम जीवको सूत्र कहता श्रीघीतरागके बचन
 कुमार जो श्रीगणवर आठिकाने रचना करी है उस रचनाके
 पुस्तार अर्थात् आगमके लिखे हुए बचन को मानना उसका नाम
 रचि है । सो सूत्रोंके नाम लिखते हैं । प्रथम (११) अगरे
 लिखते हैं । १ आचागम । २ मृयगहाग । ३ गणाग । ४
 वायाग । ५ भगवती । ६ ज्ञाता धर्म कथा । ७ उपासकदशा । ८
 त्तगडशा । ९ अनुत्तरोवमाई । १० प्रश्न व्याकरण । ११ वि-
 यह (११) अग जानता । बारहवा अग दृष्टिमाद
 सम (१२) पूर्व से परन्तु अत्र विच्छेद हो गये है ।
 (१२) उपागमे नाम लिखते हैं । १ त्रमाई । २ रायपसेणी । ३
 भागम । ४ पत्रपणा । ५ जम्बू द्वीप पत्रती । ६ चन्द्र पत्रती
 ७ सूत्र पत्रती । ८ कार्पीया । ९ कल्प त्रिहमाया । १० पुष्कीया
 ११ पुष्क चूलाया । १२ छन्नादशा । यह (१२) उपाग जानना ॥
 उन्के नाम । १ अत्रहाग । २ बृहत्कल्प । ३ दनाश्रुत स्कन्ध
 ४ निशीथ । ५ महा निशीथ । ६ जीत कल्प ॥ (१०) पयत्राके
 नाम ॥ १ चौसरण । २ सजारा । ३ पवेता । ४ तन्दूल त्रियाली
 ५ चन्द्र विचय । ६ गणिविजय । ७ दविन्द श्रु । ८ घोरगुरु
 ९ गच्छाचार । १० नोतिष्कगट ॥ (४) मूत्र सूत्राक नाम ॥ १
 तापश्यक । २ वज्रै काणिक । ३ उन्नराध्यया । ४ ऊचनिर्युक्ती ।
 ५ ग चुनिना सूत्र ॥ १ नन्दी । २ अनुयोगद्वार । ये आगम (सूत्र)
 नैर्युक्ती, भाष्य, चूर्णी, टीका, पचागका बचन माने और आगम
 पुननेना वा पृष्ठनेकी बहुत रचि होय उसको सूत्र रचि कहते हैं ।
 अत्र चौथी धीज रचि का स्वरूप कहते हैं । जो जीवगुरु मुग्से
 एक पदका अर्थ सुनकर अनेक पत्रके अर्थको जाने उसका नाम

बीजरुचिहं । अब अभिगम रुचि कहते हैं । जो सूत्र सिद्धान्त
 अधसे जाने और अर्थको विचारे और पढ़ने पढ़ानेकी अत्यन्त
 चाहना होय जिमको उसका नाम अभिगम रुचिहं । अत्र विस्तार
 रुचि कहते हैं । छ द्रव्यजाने उसका गुण जाने पयाय जाने और
 इन सबको प्रमाण अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, और आगम,
 आदिनय, युक्ति, हतु करके जाने और उत्तीरति की श्रद्धारक्खे
 उसका नाम विस्तार रुचि है । अत्र क्रिया रुचि कहते हैं । ज्ञान,
 दर्शन, चारित्र, तप, विनय, सुमति, गुप्ती, आदि वाह्य क्रियासे
 बहुत रुचि है जिमको उसका नाम क्रिया रुचिहं । अत्र सक्षेप रुचि
 कहते हैं । जो ज्ञानसे धाडा अर्थ सुने और बहुत अर्थ को जाने और
 उस अर्थके जानने से कुमति कदाग्रहम न पडे और दुग्धगर्भित
 मोह गर्भित वैराग्य वाले आडम्बरा जोकि अपने पूजाने के वास्ते
 अनेक तरह की प्रिटम्बना कर रहे हैं । उनके फन्दम न आवे और
 जिन मतसे यथावत प्रीति मानं उसका नाम सक्षेप रुचि है । अत्र
 धर्म रुचि कहते हैं । पचास्तिकायका स्वरूप जानकर श्रुत ज्ञानसे
 चारका छोड एक स्वभाव अन्तरग सत्ताको सरदहे अर्थात् माने
 उसका नाम धर्म रुचि है । इस रीतिसे (१०) रुचिका
 स्वरूप कहा । अब समक्तीके (८) गुण कहते हैं सो पेशतर
 उनके नाम लिखते हैं । १ निश्चका गुण । २ निक्करा गुण । ३
 वितिगिच्छा गुण । ४ अमूढ दृष्टीगुण । ५ उपवृहण गुण । ६ स्थिरीक-
 रण गुण । ७ बच्छलता (दूसरे सर्व जीवोंको अपने समान जाने
 और सबकी रक्षाकर और उनको सहायता दे) गुण । ८ प्रभा-
 वना गुण । अब इन आठों गुणोंका किंचित् भावार्थ लिखते हैं ।
 जिनागम (शास्त्र) (सिद्धांत) में सूक्ष्म अर्थ कहा है उस अर्थ
 को सधा माने जसमें कोई तरहका सन्देह करे नहीं और उपदेश

देन में अथवा धर्म पालनेमें (७) भयमें मे कोई तरहका भय न
 कर सकना नाम निदाका अर्थात् निर्भय गुण कहते हैं । दूसरा
 निदाका गुण यह है कि । किसी चीज की चाहना
 अर्थात् कांक्षा न रखने उसका नाम निरस्य गुण है सो ही
 दियात है कि जो शुभ करणी के करने में पुण्य रूप फल की
 चाहना करके जो शुभ क्रिया का करना उस क्रिया की इच्छा
 है तथा इच्छा है तथा कर्म बन्धन है इसलिये उस पुण्य रूप
 फल की नहीं है चाहना जिस को निरस्य गुण कहत हैं । अत्र
 विनीगि चञ्छा गुण कहते हैं । जो शुभ अशुभ पुद्गल के सा एक
 सरीखा है उन दोनों में हर्ष शोक न करे और उन दोनों पुद्गलों
 को दग्ध कर दुर्गन्ध में ग्लानि और सुगन्ध में हर्ष न कर क्योंकि
 पुण्य व उदय में शुभ पुद्गल मिलकर सुख देता है सा उम में
 अहंकार आदि न करे और पाप के उदय से अशुभ पुद्गल मिल
 कर दुःख प्राप्ति होता है सो उस दुःख से निल गौर नहीं होना
 इन दोनों तरह क पुद्गलों को एक सरीखा समझना उसी का
 नाम विनीगि चञ्छा गुण है । अत्र ४ अमूढ दृष्टि गुण कहत हैं ।
 अमूढ कहता गूर्भतापन नहीं है जिस में एमी है दृष्टि जिसकी
 उमका नाम अमूढ दृष्टि है सो यह अमूढ दृष्टि वाला आगम में
 कहे हुए सूक्ष्म विचार निगोद आदि के सुनकर और ७ द्रव्यों
 की सूक्ष्म रीति की सुनता हुआ घयराय (अमूजे) नहीं जो
 उस से समझा जाय उसकोतो समझ लेय और जा उसकी समझ
 में न आवे उसको यथावत् माने सन्नेह न करे क्योंकि वीतराग
 का ध्यान सत्य है ऐसा है गुण जिस में उसका नाम अमूढ दृष्टि
 गुण है । अत्र ५ उपवृद्ध गुण कहते हैं । जीव अपने गुणकी टिपावे
 नहीं क्योंकि जीव में अन्त ज्ञानादि गुण हैं जैसी शुद्ध सत्ता है तैसी

हो कह आर रागद्वय असात कम का उपाधि है जोर द्वागउपाधि से न्याग है । अब रिरा करण गुण करन है । असा परिणाम अपन आत्म ध्यान म गिरर रकाय टिग नहीं अधरा कोइ दूसरा भाय प्राणी धम म गिरता हय उस भाय जात्र का सहायता द कर प्रथमा उपदेग आदि अनक रातिम उनका गिरर कर उसका ताम तिथी करन गुण है । अब मातरा वात्सल्यता गुण कहत है जिन पुरुषासे अपनी ज्ञान ध्यान तप पडिस्मना सामायक आदि तियाम भेठ हाय और उनम अपनी गदाम द्वाः तरहका फक न हाय जर्धान एक गदाम हाय उसका नाम सावर्भा है । उम माधमाकी भक्ति का करना उसका ताम बच्छलता गुण है । अत्र आठवा प्रभावना गुण कहने है । जो वातराग सर्वज्ञ दव अपनपाता परमेश्वरर धम का मणिमा कगर और शुद्ध धर्म की प्रनृती कर आर मित्रात्न न दूरकरे दत्त गाना थाजा आड करर वत्तग कर हागा को गाने पानमें तगाय कर इकट्ट करता वा धर्म का प्रभावना नहीं धर्म की प्रभावता बदा है कि जिसमे आत्म स्वस्व की प्राप्ति होय एसा जो ज्ञानादि गुणम रीतरागके धर्म का नो मणि मा जी करना उमाका नाम प्रभावता गुण है इसरी- तिम समकितक ८ गुण कह । अत्र समगताक १ भूषण कहते हैं १ उर सम भात्र भूषण । २ आस्ता भूषण । ३ रवा भात्र भूषण ४ मन्त्रग भूषण । ५ रिाि भूषण । अत्र इन पात्रारा अर्थ करते हैं । प्रथम उपमम भाव भूषण वाताजीव पत्तार तो किसी प्राणासे कपाय अर्थात् कलर आदि कर नहा एत्तारिर् काई र्भर सयाग से कहत आदिक हो भी जाय ता एस कलर का तुरत मिटाये और मनम पश्चात्ताप कर और मिटायेर गद सत्य जर्धान कोइ

नरहका विराध मनमें न रक्खे उसका नाम उपसमभार
 भूषण है । अत्र आस्ता भूषण कहते हैं । जो श्री वातराग
 सर्वज्ञ त्वे अपक्षपाती विपम्बाद के विना जा आगमों मे
 आज्ञा कही है उस आगम के वचन क ऊपर शुद्ध प्रतीत
 का रखना गार अपनी शक्ति अनुसार उसका आज्ञा मे चलना
 और आगम के ऊपर आस्ता रखना उसका नाम आस्ताभूषण है ।
 अत्र दर्या भूषण कहते हैं । सब प्राणी भूत मात्र को अपन समान
 जान कर उन की रक्षा करे और जहा तक बने वहा तक अपनी
 शक्ति अनुसार किसी भूत प्राणी को दु ग्य न देय उसका नाम
 दर्या भूषण है । चांरा सम्प्रेग भूषण कहते हैं । माना पिता पुत्र
 स्वत्र धन धान्य आदि मे उदास होकर उनको छोडे फिर शरीर
 इन्द्रिय आदिक से उदास होकर उनको विषयादिन मे न प्रवृत्त
 होने देना उसका नाम सम्प्रेग भूषण है । अत्र पाचवा निर्वेद
 भूषण कहते हैं । इम सत्सार में शरीर इन्द्रिय आदि के सुग्न
 जाय ने अनन्तिवार भोगे हैं परन्तु वृत्त न हुआ कवल दु ग्यका
 कारण हुआ क्योंकि यह शरीर इन्द्रिय के विषय आदिन ही
 चन्म मरण कराते हैं इसलिये रे जाव ? तेरे लायक यह शरीर
 इन्द्रिय आदिक नहीं तेरतो एक चिदानन्द मोक्ष मई अतीन्द्रि
 य-आत्म सुख वो सुख तेरा है और कोई तेरा नहीं ऐसा है विचार
 जिसका उसका नाम निर्वेद भूषण है । इम रीति से समगती के
 प्राच भूषणका वणन किया । अथ समगती के (६) आयतन कहते
 हैं । निश्चय बुगुन यह है कि जो श्री वातराग सर्वज्ञ त्वे
 -अपक्ष पाती परमेश्वर का वचन अर्थात् शास्त्र का खोटा
 (भूटा) अर्थ करे उस राटे अर्थ से अरेक माले

कुमार्ग म प्रवृत्त होजाते हैं इसलिये निश्चय कुगुरु है । और व्यवहार कुगुरु वह है कि जो आचार हान भयधारा जो यती नाम धराने और यती पना न पाले अथवा जगम यागी आदिक हैं । अत्र कुन्व का स्वरूप कहते हैं कि निश्चय से कुदेव वह है जिनने वितराग का स्वरूप न जाना । अथवा अपनी आत्मा का स्वरूप जाना । अब इस जगह कई ऐसा शका करे कि भला देवका स्वरूप न जाना सा वीतराग देव कुदेव कैसे हुआ इस शका का समाधान ऐसा कि जिस पुरुष ने देवका स्वरूप नहा जाना और वह उस देवका भाताहै सा उस मानने वाल स देवका स्वरूप जान बिना उस देवका आशातना नहीं टलती और उसका आज्ञा नहीं पलता इसलिये वह आशातना करनेस और अज्ञान पालनसे अ तससारा हाता है । इसलिये निश्चय म कुन्व है कि व्यवहार से कुदेव वह है कि जा राग सहित है कि जिसमे राग द्वप है और त्वा आविक का जिनको सग है वह व्यवहारस कुदेव है । निश्चय कुधर्म उसका कहते हैं कि एकात माग बाह्य करणा का करना और अन्त रग म ज्ञान नहीं जाना और आत्म सत्ता नहीं जानकर केवल धम धर्म पुकारत हैं । व्यवहारसे कुधर्म वह है कि शुद्ध धर्मको छोड कर काम मार्गी अथवा पर मतमें पडना उसका नाम व्यवहार से कुधर्म है । इस रीतिस कुदेव, कुगुरु, कुधर्म, का छोडना । सुदेव, सुगुरु, सुधम को मानना उसका नाम सम्यक्त्व ह । अत्र समक्ति का किंचित लक्षण पावणा सूत्रस कहत है । गाथा । परमत्य सध-
 वोवा सुदिठ परत्य मेवणावात्रि वायत्र कुदसणा वज्जाणायस
 मत्त सदहणा ॥ अर्थ ॥ इस गाथाका परमार्थ ऐसा है कि छः

इस शरीर तब तब अथवा इनका गुणपराय है तिमछो ज्ञेय रूप
 परन्तु मायका कारण द्रव्योंका जानना है इसीलिये इसका
 मूल अर्थ जाननक वाम्ने बहुत अन्याय को और
 मद्य बहुत कथि होत उमको सुदिठि कइता मली तरह
 इत और जनि राग्भार अभ्यास करे और इन छ द्रव्योंका
 शरणा मोर्गे मोर्गे मार्गे जानकर अच्छी तरहमें गुरुकी
 सेवा को क्योंकि जानी गुरुके पासहो इन चीनोंक सूक्ष्म अर्थ
 प्राप्ति हाते है इमानिये जानी गुरुका धारण करे और वायन्न कहता
 जिन मतमें यती नाम धरानेवाले अथवा दु स्य गर्भित मोह गर्भित
 वैराग्य वाल है और श्रेयपान आदि देवताआ को मानने वाले ह
 उनका सग न को क्योंकि समकृति बिना जनना सग करनेसे
 मिथ्यात्वको प्राप्ति होता है । और बुद्धिनी कहता अन्यमती आदि
 क ननका भी भगन करे और हृदय जान सीरनेको इच्छा करे
 ऐसा है पारेणाम जिसका उसको समकितको सर्वहना जानना
 फिरभी समकितके वाम्ने गाथा कहते हैं । गाथा । विरयास्तः
 ज्ञात कषाय हीणा महव्रथधराविव सम्मदिठिवतुणाकया विमुक्ते
 न पावति । अर्थ । सावद्य आरम्भसे विराम अर्थात् आरम्भ आदि
 कका त्याग क्रिया है और क्रोधादि कषाय जाता है और पचम-
 हावृत पालता है ओर (४२) पाप आदि टाल कर अहार पानी
 लेता है इत्यादि अनेक क्रिया जिन मतकी कर रहा है परन्तु सम
 कितके बिना कदापी जीव मोक्ष जावे नहीं इसलिये समकित की
 मुख्यता है । अब इस जगह कोई ऐसा शक करे कि सम-
 कित क्या चीज है । तिसका सन्देह नो वाम्ने
 कहते हैं । गाथा । नवभंगपमाणेहि

मास्त्रमस्त्रसम्गादिठि उसान्त्र । अर्थे । तत्र करके जान
 भाग करके जान और प्रमाण करके जाने किसका रि अपने
 आत्मा के स्वरूपका क्याकि स्याद्वाद आड पत्र का जानन था
 जाव अपना कल्याण कर और इस ग्याद्वादराति स माश मार्ग
 और कम व्यवस्थाका जानकर पर वस्तु का हय अर्थात् छाडने
 के याव जान कर छाड और स्वय गुण अधान् जाव गुण शानद-
 शन चारत्र उपादय जान कर ग्रहण कर । ऐसा है व्यवस्था तिस
 री उसका समझिना जानता । अब ममाशितो जाव स्वरूपका
 ध्यात करे सो गाथा कहते हैं । गाथा अक्षमिषा रतुमुद्रो निम्न-
 मउनाय दसनसमगा वग्मिठिउतधितो सव्यण्णयनमि ।
 ॥ अथ ॥ जा समझितो शाना पुरुष है वह णसा रिचार कि म एक
 ह पर वस्तु अर्थात् पुद्गलस न्यारा ह और निश्चयाय अर्थात्
 नि सद्द करके शुद्ध । मर में भजानमल किचित भी नहीं
 निमल ममता करके रहित ह और ज्ञानदर्शन करके सम्पूर्ण
 भरा हूँ मैं ज्ञान स अपन म स्वभाव मीश्वर प्रकाशवान हूँ अपने
 गुण में ही सदा रहता हामेरेमें चेतना गुण सत्य है और साश्वता
 है इस रीति स आत्मस्वरूपका ध्यावे सा सर्व कमरा क्षय पर ।
 अब दूसरा गाथा और भी कहते हैं ॥ गाथा । निरजग निकल
 अयन देव अणाइ अणइ अणत चयण लक्षण सिद्धसमपरमप्यासि
 वरान्त ॥ अर्थ ॥ मैं कर्म अत्र स रहित हूँ इमानिय म निरजन हूँ
 कतक करके रहित इस लिय मैं नि कलहूँ अचल अर्थात् अपने
 स्वरूपसे कदापि न चल इस लिय मैं परमद्वहूँ मरा आदि मा नहीं
 और अन्तभी नहीं है केवल चेतना लक्षण प्रकाशरूपहूँ सिद्धसमान
 हूँ परमात्मा हूँ परम उत्कृष्ट आत्मा हूँ सिवरूप सिद्ध हूँ सत्यसत्ता

मयी हू । गाया । जीवादि सदृशण मन्मथ त्म अधिगमानाण तथ
 व सया रमण चरण एमोहु मुकर पदा । अर्प । नीवादि छ द्रव्य
 दो जान इसमने पाच अर्थां व द्रव्यो छाड और एक चोर द्रव्य
 के स्वयगुणमें निर रहें उत्तना नाम चारित्र है इस गीतिका ज्ञान
 दर्शन चारित्र शुद्ध रत्न त्रयका सम्यता साक्षी मात्र मार्ग है इस
 लिये इस ज्ञान दर्शन चारित्र या उद्धृत बन्न करे और इस रत्न
 त्रयका पाप कर प्रमाद न करे वो निश्चय चारित्र है । अथ रत्न
 त्रय व्यवहार को गाया करते हैं । गाया नित्यमग्नो मुनयो
 वन्द्यहारी पुत्र कारणा पुत्रो पदमो सम्पन्नो आनन्दहृदयैर्वाङ्
 । अर्थ । निश्चय नय करके ज्ञान मार्ग सत्ता रूप सा मात्र का
 कारण है अथान् मात्र है और व्यवहार नयम जा किया जा करना
 सो पुण्य धन्यनका कारण है इसलिये पहला जा कदा निश्चय
 नय सा मन्वर रूप है या मन्वर रूप निश्चय नय एक है जुदा
 नहा । और जा व्यवहार नय है सा आश्रय रूप नया कर्म पापों
 का हेतु है क्योंकि दया या शुभ व्यवहार है सा पुण्य धन्यनका
 हेतु है और अशुभ व्यवहार है सो पाप कर्म धन्यनका हेतु है ।
 न लिये इस आश्रय रूप व्यवहारके अनन्य भेद हैं । अथ इस
 यह शिष्य सत्ता है कि नय व्यवहार नय आश्रय है और
 धन्यनका हेतु है ता हम व्यवहार नयको आश्रय है और
 एक निश्चय नय सम्पन्न रूप को अर्गाकार करेगे
 के व्यवहार ता कम उन्धाका हेतु है और निश्चय मात्र मार्ग
 हेतु है इसलिये निश्चयका जाकार करना ठाक है । एसा
 का प्रश्न मुनकर गुरु उत्तर देत है कि हे दयानु प्रिय । निश्चय
 व्यवहार दानोंका अर्गाकार करेगे क्योंकि शाखोंम श्रीवीतराज

सर्वज्ञ देवने निश्चय और व्यवहार दोनों ही का कथन किया है ।
 (यदि उक्त गाथा) जइनिण मयपरज्जइ तामाववहारनितिय
 म्मु यह ण्केग विग्गातिथ्य ठिज्जइ अन्नेणउतच्च ॥ अर्थ ॥ श्री
 बौतराग सर्वज्ञ देव फरमाते हैं कि हे भद्र प्राणियों ! जो तुम्हारे
 को जिन मतकी चाहना है अथवा जिनमती हो तो मोक्ष सुख
 को तभा पाओगे जत्र निश्चयनय और व्यवहारनय, को अगीकार
 करोग। जत्र तुम्हारेको मोक्ष अर्थान् जन्म मरण मिट कर साइवना
 सुख मिलेगा । इसलिये दाना नय को मानना क्योंकि व्यवहार
 नय चलना और निश्चय नयकी श्रद्धा रगना । और जो तुम
 व्यवहारनय उठाओगे तो तीथ अर्थात् सामन उठ जायगा ।
 इसलिये व्यवहार नयको मानना ठाक है क्योंकि गुरुको बन्दना
 नमस्कार करना और देवका पूजन आदि करना अथवा तपस
 यम पञ्चरानादि व्यवहारके उठानेसे मत्र उठ जायगा । जत्र
 आचार क्रियादि सत्र उठ जाय ता निमित्त कारण भी उठ गया सा
 निमित्त कारणक उठनेस अकेले उपादान कारणसे वायकी सिद्धि
 होय नहीं इसलिये निमित्त कारण रूप व्यवहार को अपश्यमेव
 मानना चाहिये । कदाचित् कई अकेला व्यवहार नय माने
 तो निश्चय नय जाने बिना तत्वरूप आत्म स्वरूप की खबर पडे
 नहीं इसलिये तत्वरूप माग जानने क वास्ते निश्चय नय चाहिय
 और बिना निश्चय क मोक्ष होवे नहीं इसलिये निश्चय नय और
 व्यवहार नय दोनों को मानना अवश्य मेव है क्योंकि शास्त्रो मे
 ऐसा कहा है (ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्ष) इति वचनात् इसनिय
 ज्ञान से हेय और उपादेय की परीक्षा करके क्रिया करे क्योंकि जिस
 क्रिया में कर्म बन्ध हतु होय उस क्रिया का हेय जान कर छोडे

और जिस क्रिया में कर्म बन्धन होय और आत्म स्वरूप की प्राप्ति होय उस को उपादेय जान कर ग्रहण करे इस रीति से ज्ञान और क्रिया दोनों ही मोक्ष का हतु है सो ज्ञान सहित क्रिया प्रमाण है। और ज्ञान बिना जो क्रिया का करना सो तुच्छ रूप पुण्य फल का कारण है इसलिये निश्चय बिना व्यवहार निष्फल है और निश्चय सहित व्यवहार फल दायक है सो इस जगह दृष्टांत देकर लिखाते हैं कि जैसे सोने के ग्रहण में शामिल हुआ जो उप धातु अर्थात् टाका आत्कि मो भी उस मोने के साथ में ऊंचा प्रकृता है परन्तु मोने में उस उप धातुको जुदा करके बच तो सोने के सामने उप धातु अर्थात् टाका को कोई नहीं लेता और सोने को सब कोई लेते हैं। तैस ही सोन समान निश्चय नय है इसलिये निश्चय नय सहित जो व्यवहार सो अच्छा है। और निश्चय क बिना जो व्यवहार सो निष्फल है इसलिये श्री वीतराग सर्वज्ञ देव ने आगमा में निश्चय व्यवहार रूप मोक्ष का मार्ग कथन क्रिया है। अब अन्य जीवों के वास्ते शरीर के ऊपर मिमत्त करे उस के वास्ते गाथा लिख कर दिखाते हैं (गाथा) छिज्जा भिज्जो जाय रउ जो ईहमेहु शरीर अप्पा भावे निम्मलोजपाव भवतोर। अर्थ। हे भव्य प्राणियों! एकाम चित्त हा करके ऐमा चिन्तवन, अर्थात् ध्यान करा कि यह शरीर छिज्जो कहता चाहे जितना दुबला (नाताकत) और भिज्जा कहता पानीसे भी जो और नाशको प्राप्त होय क्यों कि यह शरीर पुदगर्वाफ वस्तु है सो मेरा नहीं किन्तु पर वस्तु है सो यह पर वस्तु एक दिन अवश्यमेव छोडना पडेगी इसलिये हे प्राणा तू! अपनी आत्माको ग्रहण कर और उसीमें एकाम चित्तस

रमणता कर और वो आत्मा निर्मल है इसलिये तू ससार समुद्रसे तिर और जन्म मरण का भिटा । फिर दूसरा गाथा कहते हैं । गाथा । एहिज अप्पा सो परमप्पा कम्मविस सोई जायो जप्पा इयमें देव ज्वाजु सो परमप्पा बहुतुल्ल अप्पा अप्पा । अर्थ । श्री वातराग सर्वज्ञ देव कहते हैं कि अहो भव्य जावो, यहा अपनी आत्मा जो इस शरीरमें है साही निश्चय अर्थात् नि सन्देह करके परमात्मा अर्थात् शुद्ध ब्रह्म है परन्तु अज्ञान अथान् कर्म रूप उपाधिके वर्णमें होकर इस ससारमें जन्म मरण करता है परन्तु जिस समयमे यह जाव अपने आत्म स्वरूपको जानगा उस वक्त उस अज्ञान रूप उपाधिको दूरकरगा तब परम देव परमात्मा तुहीं हागा । इसलिये हे भग्य प्राणियों ! तुम अपनी आत्माकाही तरण तारण जहाज जान कर एकाम चित्तसे आत्मा का ध्यान करो और इसाम लीन हो तो यह तुम्हारा आत्माहा परमात्मा है इस परमात्मा पनेना सिद्ध करने के वास्ते कलिकाल श्रुत केवली अत्रतार श्री डमाचार्य जी महाराज श्री वातराग स्तोत्र म कहते हैं साही दिखाते हैं (श्लोक) य परात्मा पर ज्योति परम परमेष्टिना आदित्य वर्णो तमस परस्ता दामनति यम् । १ । सर्वे येनाद मूल्यत समूठा क्लेगपादना इत्यादि । अर्थ । यह जीव ही परमात्मा परम ज्योति है और पच परमेष्टी स अधिक अर्थात् बहुत पूय है क्योंकि पच परमेष्टी तो मोन मार्ग का दिखाने वाला निमित्त कारण है और उद्दान कारण नहीं और यह जो अपना आत्मा सो ही मोश्रना जाननाला और उपादान कारण है और अज्ञान को मिटानेवाला और सर्प क्लेश अर्थात् कर्मा को दूर करनेवाला यह जीव है इसलिये इस आत्मा हा का ध्यान

करता और इस आत्माही के ऊपर परम स्नेह रखना क्योंकि यह शुद्ध ब्रह्म परम निर्मल है। इस रीति को जान कर आत्मा को उपादेय अर्थात् ग्रहण करे और सरल अपने से जिम मुजब निर्वाह होय तिस मुनब त्याग वैराग्यमे प्रवृत्त होय और धन आदि पर वस्तु जान करके सुपात्र और पात्र आदिमा का अनेक रीतिमे दान्त्ये और इन्द्रिय आदिकोका विषय कर्म बन्ध हेतु जान कर विषयको परिहरे (छोड) और शील अर्थात् ब्रह्मचर्ये पाले। और अहारपुद-गल पर वस्तु है मो अहार आदिक शरीर की पुष्टी करनेवाला है और शरीरकी पुष्टीमे इन्द्रियोंका विषय रहता है और इन्द्रिय पुष्ट होती है मा शरीर इन्द्रिय आदिक पर स्वभाव और अज्ञानका रहानेवाला समार का हेतु है क्योंकि इस शरीर इन्द्रियकी अनादि कालमे नाना प्रकारके विषय आदिक अर्थात् अहार (भोजन) आदिक नाना प्रकारका भोजन किया, परन्तु इसकी तृप्ति न हुई और समार में जन्म मरण हीं बढता गया इसलिये अहार आदिक का त्याग करना शक्ति अनुमार भव्य जाया को अवश्यमत्र उचित है। और श्री वातराग मंत्र देवका वृत्तन भी करना उचित है क्योंकि वीतराग अर्हन्त येवन मोक्ष मार्गका उपदेश दिया है इमालिये वे वीतराग दय विभिन्न कारण उपकारी है सा इन उपकारियोंका उद्गु मात्र भक्ति अर्थात् टाकी आज्ञा माकर उस आज्ञा से चलना उमाना नाम पूना है। इस रीति से जा ता शील तप पूना सर्व जात्र अजीव चात्र विना पुण्य रूप इन्द्रिय सुखाका कारण है। और जा जायका उपादेय अर्थात् ग्रहण करवा दुत्रा इन्डा अर्थात् मसारी मुखसे प्रिया जो दात शाल तप आदिक का करना सा निर्वाह का हेतु है इसलिये ज्ञान विना सर्व कर्म बन्धना हेतु है। इसलिये

ज्ञानका बहुत अभ्यास करना सो ज्ञान अभ्यास करने की श्री वीतराग सर्वज्ञ देव की सब भव्य जीवों को शिक्षा है । सो उस ज्ञान होनेका हतु श्रुत ज्ञान अर्थात् श्रवण करना है इसलिये श्रुत ज्ञान का बहुत अभ्यास करना, और भाव सहित धारना रखना और उसी में प्रवृत्त होना क्योंकि शास्त्रों में कहा है सोही दिखाते हैं कि श्री गणागजी अथवा उत्तराध्ययन जी वा भगवता जी आदि अनेक सूत्रों में कहा है कि वाचना पूठना वारम्बार विचारना करे उससे महा निर्जरा होती है क्योंकि देखो वाचने से तो सूत्र का उच्चारण स्पष्ट होता है और पूठने से अर्थ स्पष्ट होता है उस अर्थ स्पष्ट होने से मिथ्यात्व मोहादिक दूर होता है और वारम्बार विचार अर्थात् मनन करने से समकित निर्मल होती है और अनुपेक्षा अर्थात् सत्य असत्य का जो मनन (विचार) करना उससे (७) कर्मकी स्थिति का रस पतला करता है । और अनन्ता ससार रूपावे अथवा पतला करे यह दूर करनेकी अथवा पतला करने की शक्ति श्रुत ज्ञानका वारम्बार अभ्यास करनेसही अज्ञान मिटता है ऐसा श्रीवीतराग सर्वज्ञ देवने फर्माया है इसलिये हे भव्य प्राणियों ! वाचना अथवा पूठना वारम्बार इस का बहुत उद्यम करो क्योंकि आगम में ही धर्म है सोही दिखाते हैं कि इस हुन्डा सर्पनी पचम काल और भरत क्षेत्र में कोई केवल जानीतो है नहीं बल्कि मन पर्यन्त ज्ञानी और अवधिज्ञानी भी नहीं है । और इस वर्तमान काल में श्रुत केवली की अस्तित्ता का निश्चय करना दुर्लभ है नि केवल अथवा किंचित श्रुतज्ञान आगमका ही आधार है इसलिये इस कालको देखकर आत्मारथि भव्य जीव दीनता सहित बचन कहते हैं सो गाथा दिखाते हैं । गाथा । कथ अम्हारी

सापाणी दुसमा दासदस्तिया हायणा हाकह हुतानहुतोजइ
 निणागमो । अर्थ । हे भगवन्त वीतराग सर्वज्ञ देव मेरे सरोखे
 प्राणियोंकी क्या गती होगी क्योंकि इस दुसमहुन्डा सर्पनी
 पचम काल इस भरत क्षेत्र मे अवतार अर्थात् जन्म लिया है
 सो हमारेको धर्म अर्थात् आत्म स्वरूप की प्राप्ति होना मुश्किल
 हागई इसलिये हम अनाथ हैं और दीन हैं क्योंकि ऊपर लिखी
 वाताकं न होनेसे हा अलवत्ता निश्चित् जो आपका कहा हुआ
 वचन है उसका हमको आधार है जो आपका कहा हुआ शास्त्र
 आगमन होता तो हमारी क्या गती होती सो अभी के काल में
 आगमकाही आधार है इस लिये हे भन्व्य प्राणिया जो तुम्हारे
 को आत्मार्थ की इच्छा है तो आगम और आगमधर अर्थात्
 बहुश्रुतका बहुत विनय करो क्योंकि आगममे विनय का फल
 श्रवण करना है और श्रवण करनेका फल ज्ञान है और
 ज्ञान का फल मोक्ष है । इसलिये आगम को श्रवण
 करके लेने (ग्रहण) करने के योग्य होय सो तो लेना और
 छोड़ने (दूर) करनेके योग्य होय सो छोड़ना और सरदहना
 शुद्ध रखना क्योंकि सरदहना ही माक्ष का मूल कारण है और
 यह इन्द्रिय सुग्य इस जीव ने अनन्तिवार पाया क्योंकि ऐसी
 जीव योनि कोई नहीं है कि जिस में यह उत्पन्न १ हुआ होय
 क्योंकि इस जीव ने अनन्ता पुद्गल परावर्त किया है इस
 ससारमें जीव को भ्रमण करते २ अनन्ता काल होगया परन्तु
 धर्म का सयोग १ मिला सो कोई पुण्य सयोग से अब मनुष्य
 भय अच्छा जाति कुल निरोग शरीर पाच इन्द्रिय पूर्णता
 निर्मल बुद्धि इत्यादि अच्छे सयोग मिले हैं । और वीतराग
 सर्वज्ञ देव की वाणी का कटनेवाला शुद्ध गुरु का सयोग

मिलने से अहो भय प्राणियों । तुम धर्म में विशेष उद्यम करो क्योंकि ऐसा मयोग मित्रता बहुत मुश्किल है इसलिये प्रमाद (आलस्य) को छोड़ दो अर्थात् मत करो क्योंकि यह शरार धन बुद्धि आयुष्य चंचल (चपल) है, ठिन २ में घटता है जैसा जलका अजना हाथम भरे और वह क्षण २ में घटती जाय तैसे ही आयु अदिक सत्र अण २ में घटती जाता है इसलिये पाच समवाय मिलनस माक्षरूप शर्यकी सिद्धि होता है सो प्रथम पाच सम्नाय का नाम कहत हैं । १ कात्र । २ स्वभाव । ३ नियत । ४ पूर्ववृत्त । ५ पुरुषाकार । अर्थात् उद्यम ॥ इन पाच सम्नाय को माने मा तो समकित्ती है ॥ इन पाचमे से एक सम्नाय को भा उठाये (उत्प्राये) सो मिथ्यात्मी है, एसा सम्मति सूत्रमें कहा है साहा दिग्गते हैं ॥ गात्रा ॥ कालो सहाय नियत पुत्रकय पुरि प्रकारण पच समवाय समस्त एगत होय भिच्छत्त ॥ अत्र इसना भावार्थ कहते हैं कि काल लिंगिना मोक्ष कार्य सिद्ध नहीं हाता इसलिये कालभी सर्व कार्योंमें कारण है क्योंकि देखा जिम कालमे जो गाय हाने वाला होय ग्मी समय म वो पाय होय इस रीतिमें काल समयायको अगीवार करके कहा । अत्र इम जगह शिष्य प्रश्न करता है कि जब कालही सत्रका कारण है तो अभय मो १ क्यों नहीं जाता । तिसका उत्तर दते हुए दूमरा रामनायका स्वरूप कहते हैं कि हे देवानु प्रिय ! अभय को काल तो मिला परन्तु उस अभय में स्वभाव अर्थात् पलटन पना नहा है इस कारण से अभय मो १ नहीं गाय इसलिये काल और स्वभाव वा कारण चाहिये । फिर शिष्य कहन लगा कि भव्य जीव मं पलटन का स्वभाव है तो सर्व भय काल मिल

मोक्ष नहीं जाते तिसका उत्तर देते कहा कि जो नियत कहते निश्चय समकित गुण जगें उस समय मोक्ष को प्राप्त होते हैं—तब काल, स्वभाव, नियत यह तीन कारण माने हैं । तब फिर पूछा कि—समकित आदि कारण तो श्रेणिक राजा के थे तो फिर मोक्ष को प्राप्त क्यों न हुआ ? उत्तर दिया कि उसके पूर्व कृत कर्म बहुत थे (पुरुपाकारके उद्यम न किये) । फिर पूछा कि शीलभद्र प्रसु-उत्तम ता वह उद्यम बहुत किये थे । उस के उत्तर में कहा कि उस के पूर्व कृत शुभ कर्म खपे नहीं थे, इमालिये पाच समवाय मिल-नेसे कार्य सिद्धी होती है । तब फिर प्रश्न किया कि मरुदेवी माताको तो ५ कारण मिले थे पर पाचवा पुरुपाकार उद्यम कुछ भी नहीं किया था, उस के उत्तरमें कहा कि उसको उन्होंने अपक श्रेणी चढाने का शुक्ल ध्यान रूप उद्यम किया था इमी वास्ते पाच समवाय मिला वस इसी से मोक्ष रूप कार्य सिद्धी होती है ।

जिम समय केवल ज्ञान करके सर्व द्रव्य रहित है, ऐसा देगें तो आकाश द्रव्य लोकालोक प्रमान है । उस में अलोक में दूसरा द्रव्य नहीं है लोकाकाशना एकेक प्रदेश में धर्मास्तिकाय का एकेक प्रदेश रहित है तथा अनन्ता जीव के अनन्त प्रदेश हैं । और अनन्ता पुद्गल परमाणु हैं और कालका समय सर्वत्र वर्त रहा है ।

अब छे द्रव्य की फरशना कहते हैं—कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश में उसी के छे प्रदेश फरशे हैं वो इस प्रकार—कि चार दिगा के चार और पाचवा नीचे और छठा ऊपर यह छे प्रदेश फरशे हैं और एक मूल पुद्गल प्रदेश इस प्रकार सात से प्रदेशका सम्बन्ध है और धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अध-
धर्मास्तिकाय के सात ० प्रदेश फरशे प्रदेशको

दूसरा द्रव्यक मूल क प्रदशकी फरशते हैं वास्तु ७ प्रदश का फरशना है, और धर्मास्तिकायक एक प्रदशमं जीव पुद्गल के अनन्ता अनन्तम जो धर्मास्तिकाय क प्रदेश हैं । उन को आकाश का फरशना तो छभा दिशा का है । पर मूल प्रदेश सहित सात प्रदेश की फरशना है और दूसर द्रव्य की तीन दिशा का फरशना है । इसी प्रकार सर्व द्रव्याकी फरशना है और आकाश सं धर्म अधर्म की अवगाहना सूत्रम है । धर्म अधर्म द्रव्य से जीवकी अवगाहना सूत्रम है । जावसे पुद्गलकी अवगाहना सूत्रम है ।

इस तरह छ द्रव्य के गुण पद्योंय सामान्य स्वभाव ११ हैं । और विशेष स्वभाव दस ह । वा आकेवला भगवन्त ज्ञान से जान, दर्शन से दर वो ११ सामान्य स्वभाव कहे हैं । १ अस्ति स्वभाव, २ नास्ति स्वभाव, ३ नित्य स्वभाव ४ अनित्यत्वभाव, ५ एक स्वभाव, ६ अनेक स्वभाव, ७ भेद स्वभाव, ८ अभेद स्वभाव, ९ भव्य स्वभाव, १० अभव्य स्वभाव, ११ परम स्वभाव यह ग्यारह सामान्य स्वभाव सर्व द्रव्य मे हैं यह सामान्य उपयोग दर्शन गुण से दर्श । अथ दस विशेष स्वभाव कहते हैं १ चतन स्वभाव, २ अचेतन स्वभाव ३ मूर्ति स्वभाव, ४ अमूर्ति स्वभाव, ५ एक प्रदेश स्वभाव, ६ अनेक प्रदेश स्वभाव, ७ शुद्ध स्वभाव, ८ अशुद्ध स्वभाव, ९ विभाव स्वभाव, १० उपचरित स्वभाव, यह दस विशेष स्वभाव हैं यह काईक द्रव्य में काईक स्वभाव है और काईक द्रव्य में काईक स्वभाव नहीं हैं, यह ज्ञान से जान ले तो सिद्ध भगवान लोका-लोक सर्व ज्ञानोपयोगसे ज्ञाता सिद्ध भगवान लाकालोक सर्व ज्ञानोपयोगसे जान रहे हैं और दर्शनोपयोग से देख रहे हैं, ऐसे अनन्त गुण अरुपी सिद्ध भगवान हैं उसी प्रकार निजकी आत्मा को जाने, उपादेय करके ध्यात्रे वह समकित जानना ।

॥ दोहा ॥

मैं वन दाहके, भए मिद्धजिनचन्द्र ॥
 जो अप्यागणे, बडे ताको इद ॥ १ ॥
 ग ऊपयसमी, ज्ञान सुधारस वृष्टी ॥
 सुखामृत मरोररी, जय २ सम्यक वृष्टी ॥ २ ॥
 ज सद् गुरु मीसछे, एहिज शिवपुर माग ॥
 जो निज ज्ञानादिगुण करजो परगुण त्याग ॥ ३ ॥
 न वृक्ष सेवो भविक, चारित्र ममकेत मूल ॥
 प्रपर अगम पद फल लहो जिनर पदवी फूल ॥ ४ ॥
 सबत सत्तर ठिहुत्तरे, मनशुद्ध फागुण मास ॥
 मोटे कोट मरोट में, बसता सुख चोमास ॥ ५ ॥
 मुनिहित सरतर गच्छ सुधिर, पुगवर जिन चद सूर ॥
 पुण्य प्रधान प्रधान गुण, पाठक गुणे पञ्चर ॥ ६ ॥
 तामु शिष्य पाठक प्रवर, सुमतिसार गुणरत ॥
 सकल शास्त्र ज्ञायक गुणी, साधुरग जसवत ॥ ७ ॥
 तामुशिष्य पाठक विबुध जिनमत परमतजाण ॥
 भविककमल प्रतिशोधवा, राज सागर गुरुमाण ॥ ८ ॥
 ज्ञानधर्म पाठक प्रवर, शमदम गुणे अगाह ॥
 राजहस गुरुगुरु शक्ति, सहजगकरे सराह ॥ ९ ॥
 तामुशिष्य आगमरुचि, जैन धर्म को दास ॥
 देवचद आनद में, कीन्हों ग्रथ प्रकाश ॥ १० ॥
 आगममारोद्धार एह, प्राकृत संस्कृत रूप ॥
 ग्रथ कियो देवचदमुनी, ज्ञानामृत रम कृप ॥ ११ ॥

यतो धर्मस्ततो जयः

श्री भोज ट्रेडिंग कम्पनी



महाशयो ! बम्बई शहर में "श्री भोज ट्रेडिंग कम्पनी" स्थापित की गई है । इस कम्पनी द्वारा सर्व प्रकारकी वस्तुएँ जैसे कागज, कलम, श्याही, पुस्तकें, घड़ियें, दवाइयें, कपड़े और मनोरंजन करने की चीज वाजा आदि बड़े लाभ के साथ मँगानेवाले सम्जनों के पास भेजी जाती हैं । हम अपने मुह से क्या तारीफ करें जब आप एक वक्त इस कम्पनी के द्वारा माल मगावेंगे तो खुद आपहीको अपने मुहसे प्रशंसा करना पड़ेगी और जब कभी आप को किसी चीज की आवश्यकता होगी आप इसी कम्पनी को आर्डर देंगे । एक वक्त माल मगाइये, अनुभव कीजिये और बाद में यदि हमारी ओर से आप को किसी प्रकार का धोखा हो तो हमें लिखिये, हम आप को दुगने दाम वापिस देंगे । योंतो आपने अनेक कम्पनियाँ से माल मगाया होगा और अनेक कम्पनियोंने आपको माल अच्छा और टिकाऊ भेजा भी होगा, किन्तु अब इस कम्पनी से भी मग्राकर देखें । हमारा लिखना कहा तक सत्य है, इस बातका अनुभव कर । विशेष क्या लिखें ज्यादा लिखने से शायद हम भी कहीं क्षतों की गिनती में शुमार किये जावें क्योंकि आजकल लम्बे चौड़े विज्ञापनों से लोगों का चित्त हटा हुआ है । इस लिये इतनाही उस । आप से कवल अब आर्डर पानेकी ही आशा रखते हैं ।

हमारा पता—

श्री भोज ट्रेडिंग कम्पनी

बम्बई न ४

गाढ़िया प्रथम का—

भोजन सुधार ।



स्वाद का स्वाद, दवाई की दवाई—शाल, शाक इत्यादि में डाल कर खाने से भोजन स्वादिष्ट होता है और चूण क तरह खाने से पेटकी बीमारिया नष्ट होता है,—कीमत की डवा ।) थोक मान खरादार को कमाशन दिया जावेगा ।

पता:—भोज ट्रेडिंग कम्पनी लिमिटेड न ४

